RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 60 अंक : 07 प्रकाशन तिथि : 25 जून कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 जुलाई 2023

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

"पूज्य नारायण सिंह रेड़ा"

कौन पहेली के तुम नहीं उत्तर, कौन दिशा के दिग्गज ना।
किस कविता के छंद नहीं तुम, कौन कल्प के अग्रज ना।
तुम अतीत की कसम से फलते, तुम हर युग को महकाते।।

बिना प्रवेश परीक्षा के सीधे काउंसलिंग द्वारा प्रवेश

DIKSHA EDUCATION

CONSULTANCY

UGC, NCTE, PCI, RUHS, RPC, RNC, PMC, MPC, AICTE, DEB **(APPROVED UNIVERSITIES)**

सामान्य शिक्षक (General B.Ed/STC) बनने का सुनहरा अवसर

B.Ed.
योग्यता: स्नातक अवधि: 2 वर्ष

BSTC
योग्यता: 12वीं (50%) अवधि: 2 वर्ष

शारीरिक प्रशिक्षक (PTI) बनें

B.P.Ed
योग्यता: स्नातक+खेल सर्टिफिकेट अवधि: 2 वर्ष

D.P.Ed
योग्यता: 12वीं पास+खेल सर्टिफिकेट अवधि: 2 वर्ष

विशेष शिक्षा (Special B.Ed/STC) में बनें शिक्षक (RCI से मान्यता प्राप्त संस्थान)

B.Ed.
योग्यता: स्नातक अवधि: 2 वर्ष

BSTC
योग्यता: 12वीं (50%) अवधि: 2 वर्ष

INC (भारतीय नर्सिंग परिषद) से मान्यता प्राप्त संस्थान

ANM (केवल छात्राएं) (आयु: 17 वर्ष)
योग्यता: 12वीं (कला/विज्ञान/वाणिज्य) अवधि: 2 वर्ष

GNM (आयु: 17 वर्ष)
योग्यता: 12वीं (कला/विज्ञान/वाणिज्य) अवधि: 3 वर्ष

PCI (फार्मेसी काउंसिल ऑफ इंडिया) RPMC/MPC से मान्यता प्राप्त संस्थान

D.Pharma
योग्यता: 12वीं (विज्ञान) (आयु: 17 वर्ष) अवधि: 2 वर्ष

DMLT/DRT
योग्यता: 12वीं (विज्ञान) अवधि: 2 वर्ष

डिग्री / डिप्लोमा / REGULAR-DISTANCE COURSES

BA, BSC, BCOM, MA, MSC, MCOM, MSW, BBA, MBA, DJMC, BJMC, BSC (Agriculture), All Type Diploma: Yoga, Fire & Safety, Polytechnic, DAESI (खाद बीज डिप्लोमा), B.Pharma, 10&12th (RBSE, RSOS, BOSSE)

DIKSHA EDUCATION CONSULTANCY • JODHPUR, RAJASTHAN

ADMISSION OPEN

For more information

ENQUIRE NOW

भवानी सिंह भाटी

94611-52535

गोस्वामी सभा भवन के पास,
इंद्रा कॉलोनी बाड़मेर (राजस्थान)
94611-52535

विश्नोई भवन, भाटी सर्किल,
रातानाडा, जोधपुर (राजस्थान)
97999-96838

संघशक्ति

4 जुलाई, 2023

वर्ष : 60 अंक : 07

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क – एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय – सूची

☞ समाचार संक्षेप	✍	04
☞ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	07
☞ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैनसिंह बैठवास	08
☞ पृथ्वीराज चौहान	✍ विरेन्द्रसिंह मांडण	12
☞ महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	✍ श्री भँवरसिंह मांडासी	14
☞ लक्ष्मी, कर्म, धर्म और सच	✍ गोविन्दसिंह कसनाऊ	18
☞ दाता ने कहा था	✍ औंकारसिंह 'सात्यकि'	19
☞ राव देपालदे	✍ शैतानसिंह मेड़ी का मगरा	23
☞ आदर्श और अनूठे गाँव	✍ कर्नल हिम्मत सिंह	25
☞ गुणकारी नीम	✍ संकलित	30
☞ अपनी बात	✍	34

समाचार संक्षेप

उच्च प्रशिक्षण शिविर :

श्री क्षत्रिय युवक संघ का उच्च प्रशिक्षण शिविर जयपुर में 18 मई से 29 मई तक सम्पन्न हुआ। यह शिविर सीकर रोड़ स्थित भवानी निकेतन प्रांगण में सम्पन्न हुआ। रहने को बहुत बड़ा भवन था तो खेलने को ट्रेक्टर से सफाई कर दस मैदान तैयार किए गये थे। शिविर वाले भवन के सामने ही सफाई करके ध्वज स्थल बनाया गया था। जिसमें 61 घटो की व्यवस्था सुन्दर थी। पानी के लिये नल-कूप भी थे तो टैंकरों द्वारा भी सेवा दी जा रही थी। शिविर में 575 स्वयंसेवकों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। सुबह 4 बजे से रात्रि में 10 बजे तक व्यवस्थित कार्यक्रमों के माध्यम से जीवन में जागृति का प्रशिक्षण लगातार दिया जाता रहा।

सुबह जागृति के साथ ही प्रेरणादायक गीत के साथ दिवस को प्रारम्भ करते थे। निवृति आदि के बाद केसरिया ध्वज के समक्ष वंदना की जाती जिसके साथ संरक्षक श्री का प्रभातकालीन संदेश भी मिलता और फिर खेलों का कार्यक्रम होता। शारीरिक स्वास्थ्य के लिये खेल जहाँ आवश्यक हैं, वहाँ संघ के खेलों के माध्यम से विभिन्न सद्संस्कारों को व्यावहारिक रूप देकर जीवन में उतारने का प्रशिक्षण चलता है। खेलों और मस्ती भरे प्रेरणास्पद गीतों के बाद ऐतिहासिक आदर्श पुरुषों की जीवनी की शाब्दिक झाँकी का भावनात्मक आनन्द प्राप्त करते हैं।

शिविर में परस्पर चर्चा के माध्यम से संघ की विचारधारा, संघ का भाव समझने हेतु अलग-अलग पथकों में कार्यक्रम चलते रहे। बाल भोग के पश्चात मेरी साधना के अवतरणों पर चर्चा रही। चर्चा से जहाँ संघ विचारधारा स्पष्ट होती है वहाँ अपने आपको प्रकट करने का अभ्यास भी होता है। संघ कार्य में संलग्न स्वयंसेवक अपनी बात ढंग से प्रकट कर सकें, यह आवश्यक है। इसलिए अधिक से अधिक लोगों को बोलने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। पहली चर्चा के बाद स्नान का समय रहा। स्नान के बाद यज्ञ या जप-यज्ञ का कार्यक्रम रखा गया। इसके बाद दूसरी बार चर्चा का समय आता जिमसें पू. तनसिंहजी रचित सहगीतों के भावों को समझने का अवसर मिलता।

दोपहर के भोजन के पश्चात थोड़ी देर विश्राम और फिर भोजन व विश्राम से आई थोड़ी शिथिलता को दूर करने के लिये बौद्धिक खेल होते जो आने वाले लगभग ढाई घण्टे के प्रवचन हेतु चेतना को जागृत कर जाते। प्रवचन के माध्यम से संघ के उद्देश्य, उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये अपनाए गये मार्ग, संगठन हेतु लोकसंग्रह का रूप, हमारे समाज की वर्तमान स्थिति, हमारा प्रतीक केसरिया ध्वज, संस्कृति, अनुशासन, उत्तरदायित्व, नेतृत्व व ऐतिहासिक अंतरावलोकन विषयों पर विस्तार से समझने हेतु सामग्री प्राप्त होती रही।

प्रवचन के पश्चात समय आता सायंकालीन खेलों का। इन खेलों के बाद सायंकालीन प्रार्थना का समय रहता। प्रार्थना के पश्चात अपने-अपने घटों में कुछ चर्चा और फिर रात्रि भोजन का समय रहा। अब समय आता रात्रिकालीन कार्यक्रम का। अन्ताक्षरी, प्रारम्भाक्षरी, शास्त्रार्थ, प्रेरक प्रसंग, विनोद सभा आदि कार्यक्रमों से मनोरंजन भी होता तो समझ भी बढती। पश्चाताप के कार्यक्रम में जीवन में कभी न करने वाला कार्य कर लिया गया हो और फिर पश्चाताप हुआ हो, उनकी चर्चाएँ उद्घाटित होने की प्रक्रिया को बल दिया जाता है। शयन से पहले भजन करते और फिर रात्रि-

विश्राम। इस प्रकार पूरा व्यस्त कार्यक्रम दिन भर का रहता। स्वयंसेवक का ध्यान एकाग्र बनाये रखने में यह व्यवस्तता सहायक होती है।

संघ का गणवेश काला नीकर तथा सफेद कमीज सुबह की वंदना में आवश्यक रहता है। सायंकालीन प्रार्थना में इस शिविर में सफेद धोती-कमीज और केसरिया साफा गणवेश रूप में आवश्यक था। शिविर अवधि में तीन बार बरसात आई जो तूफान जैसी तेज हवाओं के साथ आई। प्रारम्भ में कुछ दिन धूप भी भरपूर रही। शिविर में समाज के विभिन्न क्षेत्रों के प्रमुख लोग भी कभी-कभी सायंकालीन प्रार्थना के समय आते रहे। पुलिस अधिकारी, राजपत्रित प्रशासनिक अधिकारी, राजनैतिक कार्यकर्ता, सामाजिक कार्यकर्ता देखने के लिये आते रहे। शिविर में राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश व हरयाणा से स्वयंसेवक सम्मिलित हुए।

बालिका शिविर :

भवानी निकेतन जयपुर के प्रांगण में ही एक दूसरे भवन में 23 मई से 29 मई तक श्री क्षत्रिय युवक संघ का बालिका शिविर सम्पन्न हुआ। इस शिविर में राजस्थान व गुजरात की 200 से अधिक संख्या में शिविरार्थी पहुँची। शिविर में पूरी व्यस्तता बनी रहे, ऐसा बालिका शिविर में भी अभ्यास रहता है। शिविर में नारी का महत्त्व क्या है? और उनका दायित्व कितना महत्त्वपूर्ण है, यह समझाया जाता है। हमारी पूर्वज आदर्श नारियों के जीवन-चरित्र के बारे में बताया जाता है। समाज की आज की स्थिति से उन्नत स्थिति तक की जाने वाली यात्रा में भावी पीढी को संस्कारित करना नारी का ही कार्य है। आज इसका अभाव है, घर में बाहर भी ऐसा वातावरण नहीं है, इसलिए अब नारी को जागृत रहकर अपना दायित्व निभाना होगा। इस दायित्व को निभाने वाली नारियों की संख्या बढे, इसी के लिये बार-बार बालिका शिविरों का आयोजन होता है। संघ के उद्देश्य, मार्ग, सौलह संस्कार, लोकसंग्रह और ऐतिहासिक अन्तरावलोकन के सम्बन्ध में प्रवचनों के अतिरिक्त खेलों, चर्चाओं व अन्य कार्यक्रमों के माध्यम से जीवन में जागृति बोध की प्रेरणा दी गई।

माध्यमिक शिविर :

जैसलमेर संभाग के खुहड़ी क्षेत्र के बरना गाँव में 4 से 10 मई तक श्री क्षत्रिय युवक संघ का माध्यमिक प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर में जैसलमेर के अतिरिक्त जोधपुर, बाड़मेर व चित्तौड़गढ़ से भी शिविरार्थी पहुँचे।

प्राथमिक शिविर :

समाचार लिखे जाने तक जून माह में 1 से 4 तक जाखाणा (गुजरात), 13 से 16 तक झालरा (उदयपुर), 15 से 18 तक जैला (सिरोही), 16 से 19 तक धोलपुर, 16 से 19 तक डभाल (जालौर), 16 से 19 तक बिंझरवाली (बीकानेर), 17 से 20 तक कैलाशपुरी (राजसमन्द) और 17 से 20 तक ही रतलाम (म.प्र.) में प्राथमिक शिविर सम्पन्न हुए हैं।

दम्पती शिविर :

8 से 11 जून तक आलोक आश्रम बाड़मेर में दंपती शिविर सम्पन्न हुआ। शिविर में राजस्थान व गुजरात से 56 दम्पतियाँ शिविरार्थी बनी। पति व पत्नी के दायित्व, पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन, पारिवारिक जीवन में सुख-शान्ति ही नहीं आनन्द की अनुभूति हेतु हमारा व्यवहार कैसा हो, यह विस्तार से समझाया ङक्षा।

महाराणा प्रताप जयन्ती :

वीर-शिरोमणि महाराणा प्रताप की जयन्ती 9 मई तथा 22 मई को अनेक स्थानों पर मनाई गई। 21 मई

को भी जयन्ती के आयोजन कई जगह रहे। कई जगह बड़े समारोह के रूप में जयन्ती मनाई गई तो कई जगह संभाग स्तर पर, कई जगह प्रांत स्तर पर, कई जगह शाखा स्तर पर और कई जगह गाँव स्तर पर भी जयन्ती के कार्यक्रम आयोजित हुए। राजस्थान में अनेक स्थानों पर और गुजरात में भी अनेक स्थानों पर संघ की ओर से जयन्ती कार्यक्रम आयोजित हुआ। अन्य प्रदेशों में जहाँ संघ का सम्पर्क है वहाँ भी वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप की जयन्ती का आयोजन हुआ। दिल्ली, सिलवासा, पुणे, फरीदाबाद, हैदराबाद, बंगलौर, मुंबई आदि स्थानों पर जयन्ती कार्यक्रम संघ की ओर से आयोजित किए गये। बड़े शहर में दो या तीन जगह भी जयन्ती मनाई गई।

अन्य कार्यक्रम :

- क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की ओर से EWS आरक्षण को बढाकर 14% करने तथा इसकी विसंगतियों को दूर करने हेतु ज्ञापन दिए गये। प्रधानमंत्री व मुख्यमंत्री के नाम दिए गये ज्ञापन में इस आरक्षण को पंचायत राज व अन्य स्थानीय स्वायतशासी संस्थाओं के चुनावों में भी लागू करने हेतु निवेदन किया गया है। 1 से 12 मई तक चले इस अभियान में 225 जगह पर पूरे प्रदेश में ज्ञापन सौंपे गये। प्रमाण पत्र बनाने में आने वाली दिक्कत दूर करने तथा महिला की गणना में ससुराल व पीहर दोनों तरफ की आय को मानने से दोनों स्थानों पर चक्कर काटना पड़ता है, अत: आय की गणना केवल माता-पिता की आय से किए जाने का भी निवेदन किया गया।
- पूज्य तनसिंहजी के जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में अनेक जगह कार्यक्रम आयोजित हो रहे हैं। चित्तौड़गढ़ के जालमपुरा और रोडजी का खेड़ा में कार्यक्रम सम्पन्न हुए।
- गोपालसर (शेरगढ) में स्नेह मिलन कार्यक्रम आयोजित हुआ जिसमें जन्म शताब्दी के निमित्त होने वाले कार्यक्रमों के सम्बन्ध में चर्चा हुई।
- कुचामन (नागौर) प्रान्त के आनन्दपुरा और बुडसू में आयोजित स्नेह मिलन कार्यक्रमों में जन्म शताब्दी पर होने वाले कार्यक्रम की जानकारी दी गई। पू. तनसिंहजी के जीवन वृत्तान्त की भी जानकारी दी गई।
- लाडनू में आयोजित स्नेह मिलन कार्यक्रम में भी संघ सम्बन्धी जानकारी तथा पू. तनसिंहजी के जन्म शताब्दी पर होने वाले कार्यक्रम पर चर्चा हुई।
- चित्तौड़गढ़ के रावतपुरा में भी नि:शुल्क चिकित्सा एवं रक्तदान शिविर का आयोजन पूज्यश्री के जन्म शताब्दी वर्ष में प्रताप जयन्ती पर सम्पन्न हुआ।
- जोधपुर-संभाग के विभिन्न प्रान्तों की बैठकें सम्पन्न हुई और जन्म शताब्दी पर होने वाले कार्यक्रमों पर चर्चा की गई।
- जन्म शताब्दी वर्ष निमित्त कार्यक्रमों में बड़ी सादड़ी में विशेष शाखा का आयोजन रहा।
- बनासकांठा (गुजरात) प्रान्त में वडगाम में जन्म शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत संघ साहित्य वितरण का कार्यक्रम रखा गया।
- हैदराबाद में जन्म शताब्दी वर्ष के निमित्त संघ संदेश हेतु स्वयंसेवकों ने संदेश यात्रा निकाली।
- माननीय संरक्षकश्री का जैसलमेर व बीकानेर प्रवास रहा। बीकानेर में झंझेऊ में कार्यक्रम रहा। जन्म शताब्दी कार्यक्रम की जानकारी भी दी गई।
- माननीय संरक्षकश्री के सान्निध्य में बूठ (बाड़मेर) में भी स्नेह मिलन कार्यक्रम आयोजित हुआ।

चलता रहे मेरा संघ

{50 वर्ष से ऊपर की आयु वर्ग की दम्पत्तियों के लिये ऋषिकेश में आयोजित श्री क्षत्रिय युवक संघ के दम्पती शिविर में दिनांक 8.3.2003 की शाम माननीय भगवानसिंह जी द्वारा प्रदत्त उद्बोधन।}

श्री क्षत्रिय युवक संघ में दम्पती शिविर का हेतु यह है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ को हम परिवार में ले जाएँ। वह वस्तुत: अगर हमारे परिवार में जाता है तो परिवार के जीवन में समरसता आनी चाहिए। अगर विकृति पैदा होती है तो संघ को जैसा है वैसा ही रहना चाहिए। संघ के परिवार में जाने का महत्त्व तो तभी है, जब वह समरसता देता है। संघ यदि ईश्वर प्राप्ति का मार्ग है तो हमारे जीवन में सुख-शान्ति आनी चाहिए। पूर्ण रूप से चाहे हमारे राग-द्वेष न मिट सकें हों पर संसार के लोगों के जीवन में जो तपन है, वहाँ हमारे जीवन में शीतलता है। परिवार में संघ का आना इसका कारण है तो इसका अहसास दूसरे घर-परिवारों को भी होना चाहिए। अन्यथा हम भ्रान्ति पाले बैठे हैं।

हम यहाँ सपत्नीक आएँ तो संभवतया श्री क्षत्रिय युवक संघ को परिवार में ले जाने में सहूलियत होगी, यह सोच था दम्पती शिविर प्रारम्भ करने का। इस प्रयोग का प्रभाव क्या हुआ, यह अभी तक आंकलन नहीं किया गया है। शिविर से पत्नी की संघ के प्रति शंकाएँ कम हुई हैं, बनी हुई है या बढ गई है? उनको भी यह तो लगता होगा कि संघ की बात बहुत सुन्दर है, पर इतने वर्षों से जा रहे हैं और जीवन में कोई अन्तर नहीं। तो फिर समरसता नहीं आ सकती। यह आंकलन स्पष्ट होना चाहिए कि क्या महिलाओं के जीवन में इन शिविरों से परिवर्तन आ रहा है, या उनका साथ लाना निरर्थक है।

'ॐ सहनाववतु। सहनौ भुनक्तु। सहवीर्यं करवावहै।'

यह मंत्र जो हम बोलते हैं कि हम साथ मिलकर पराक्रम करें, हमारा सहयोगी भाव हो, गाडी साथ-साथ चलती दिखाई दे। इस भाव से दाम्पत्य जीवन सुधरता है। खटपट न हो, हो तो दोनों की समझ से हल कर लें। परस्पर विनम्रता जीवन में उतरे ऐसी संघ की चाह है। खटपट हो तो बिना अहंकार पाले, स्वीकार कर लेनी चाहिए। आपके बच्चे, आपके पोते-पोती आपके जीवन को गहराई से देख रहे हैं, अत: परिणाम आते हैं, उनसे कुंठित होने की आवश्यकता नहीं। जो बोया है, वही पाया है। क्या अब भी नहीं सुधर सकते? सुधरें, अन्यथा सत्यानाश हो रहा है। इसे बचा नहीं सकते तो कम तो कर सकते हैं। अपने दायित्व को गंभीरता से लेकर जीवन संवारें।

एक शिविरार्थी ने कहा-''सत्संग में क्यों जाते हैं? (ऋषिकेश में रामसुखदासजी महाराज व उनके शिष्यों के सम्बन्ध में) जो कहना हो, वह आप ही कह दें। उनकी बात हमारे समझ में नहीं आती। हमारे तो क्षात्रधर्म की बात ही ठीक है।' मैं आपको यहाँ लेकर आया हूँ, उसका कोई उद्देश्य है। वहाँ भी जो बोल रहा है, वह मैं ही हूँ, ऐसा विचार कर लें। यात्रा के वर्णन से यात्रा पूरी नहीं होती, चले बिना यात्रा होती नहीं। इतने सत्संग होते रहते हैं पर सुनना मुख्य बात नहीं है, सुने अनुसार जीवन में बदलाव प्रारम्भ हो, वह मुख्य घटना है। रुकें नहीं, तो यात्रा पूरी होगी। सत्संग में वर्णन सुन्दर है चाहे कोई भी करे, पर उससे बदलाव न आए तो व्यर्थ है।

कही गई बात को आपने अपने लिए लिया या सबके लिये कही गयी माना। जब तक कही गई बात को हम अपने लिये नहीं लेते हैं, तब तक यात्रा प्रारम्भ नहीं

(शेष पृष्ठ 17 पर)

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

धरती पर जब विधर्मियों की उच्छृंखलता और दुष्टजनों की दुष्टता बढ जाती है, अत्याचार और अन्याय से लोगों में त्राहि-त्राहि मच जाती है, तब उनकी रक्षा के लिये, उनका सहारा बनकर कोई न कोई, किसी न किसी रूप में इस धरती पर अवतरित होता है जिसे हम अवतार, महापुरुष, मसीहा, देवदूत, पैगम्बर जो चाहे रूप दें, जो चाहे कहें।

वे जब इस धरा पर जनमानस को समयानुकूल नया दिशा-दर्शन देने लगते हैं, उनका मार्गदर्शन करने लगते हैं तो उनके समकालीन रूढीवादियों की जड़ें कमजोर होने लगती हैं, उनकी पैरों तले जमीन खिसकने लगती है, तो वे विरोध करने लगते हैं, आलोचनाओं पर उतर आते हैं। हम विगत इतिहास को देखें तो ज्ञात होगा कि आलोचनाओं का शिकार हर महापुरुष को होना पड़ा है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगेश्वर श्री कृष्ण, ईसा मसीह, मोहम्मद शाह, महावीर, बुद्ध, सुकरात किसका विरोध नहीं हुआ, तो फिर हमारी कौम के अग्रदूत पूज्य श्री तनसिंहजी का भी विरोध क्यों नहीं होता? पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपने इस छोटे से जीवन में अनेक विरोध, अनेक आलोचनाओं और अनेक विश्वासघातों का सामना किया, एक साधारण व्यक्ति की तरह रो-रोकर नहीं बल्कि एक महापुरुष की तरह हँसते-हँसते। आलोचनाओं को पी जाना महापुरुष का स्वाभाविक गुण होता है। सामान्य लोगों और महापुरुषों के बीच व्यक्तित्व के स्तर में बड़ा अन्तर होता है। सामान्य लोग उस अन्तर के कारण महापुरुष के कामों को समझ नहीं पाते और इसलिए उन्हें निरर्थक मानकर आलोचना किया करते हैं।

पूज्य श्री तनसिंहजी दिखने में साधारण लगते थे पर वे सही में असाधारण महामानव थे, पर उन्हें कोई समझ नहीं पाया। अपने आपको असाधारण मानने वाले लोगों ने अपनी नासमझी के कारण पूज्य श्री तनसिंहजी की भिन्न-भिन्न तरीकों से आलोचना भी की और अवसर मिलने पर उन्हें अपमानित भी किया, उनका उपहास भी किया, उनका मखौल भी उड़ाया लेकिन पूज्यश्री ने सदैव इस विष को पीकर बदले में अमृत की ही मनुहार की।

पूज्य श्री तनसिंहजी के पूरे जीवन में उनकी अनेकों बार आलोचनाएँ हुई हैं, उन्हें अपमानित किया गया, उनका उपहास किया गया और उनका मखौल भी उड़ाया गया पर लोगों की तुच्छ समझ के कारण पूज्यश्री उन्हें सदैव माफ करते रहे।

एक घटना जोधपुर की एक शाखा में हुए शक्ति-पूजा कार्यक्रम की है। आजकल तो शक्ति पूजा का कार्यक्रम नहीं होता है, पर पहले शक्ति पूजा का कार्यक्रम हुआ करता था। शाखा स्तर पर शक्ति पूजा का कार्यक्रम रखा जाता था। शक्ति पूजा में ध्वज के सामने रखे फूलों में प्रत्येक स्वयंसेवक अपनी श्रद्धा व क्षमतानुसार कुछ भेंट रखता था। फूलों के बीच भेंट को छिपाकर रखा जाता था ताकि किसी को पता नहीं चले कि किसने कितना दिया है और देने वाला अहंकार या हीनता से बच सके। ऐसे कार्यक्रम से उसमें श्रद्धापूर्वक देने का भाव विकसित होता है। इस शक्ति पूजा के कार्यक्रम में आलोचना करने वाले कुछ उदण्ड लोग भी शामिल हो गये। वे इस कार्यक्रम का मजाक उड़ाने के लिये कुछ सिक्के उछालते हुए ध्वज के सामने गये, फूलों को उछाला एवं सबको दिखाते हुए ध्वज के समक्ष सिक्के डाल दिए और कार्यक्रम का

मखौल उड़ाने लगे कि आज तो तनजी ने अपने लिए एक धोती की कीमत जुटा ली। कार्यक्रम में शामिल स्वयंसेवक का उनकी धृष्टतापूर्ण हरकत पर क्रोध आना स्वाभाविक था लेकिन पूज्यश्री ने मुस्कराते हुए अपने अनुचरों को शान्त किया और कहा कि इनकी इतनी ही समझ है, इन्हें माफ करो। जिस दिन इनको समझ में आएगा तो अपने आप शर्मिंदा होंगे। पूज्य श्री ने उनकी आलोचना का कैसा सटीक जवाब दिया, क्या हम ऐसा जवाब दे पाते हैं?

पूज्य श्री तनसिंहजी का बढता हुआ प्रभाव विरोधियों के आँख की किरकिरी बन रहा था। चौपासनी विद्यालय में पढते समय पूज्यश्री ने एक छात्र संगठन बनाया था। एक बार इस छात्र संगठन का चौपासनी स्कूल के हार्डिंग हाऊस के ऊपर हॉल में कार्यक्रम हो रहा था जिसमें काफी छात्र सम्मिलित थे। पूज्यश्री तनसिंहजी ने ज्योंहि खड़े होकर अपनी बात कहना शुरू किया, पूर्व योजना के अनुसार कुछ लोगों ने आकर पैसे बजा-बजाकर व्यवधान किया, पर वे पूज्यश्री को अपनी बात कहने से न तो रोक पाये और न उन्हें हतोत्साहित ही कर पाये। उन्होंने धैर्यपूर्वक इस कार्यक्रम में अपनी बात निष्ठा व लग्न से रखी।

पूज्य श्री तनसिंहजी चौपासनी स्कूल में पढते समय ही युवाओं में काफी प्रचलित तो हो चुके थे, पर पिलानी में पढते समय उनका पत्र व्यवहार और सम्पर्क प्रबुद्ध राजपूत युवाओं से ज्यादा होने से राजस्थान के बुद्धिजीवी, पढे-लिखे राजपूत युवकों में वे अधिक प्रचलित हो चुके थे और उनका प्रभाव दूर-दूर पूरे राजस्थान में फैल चुका था। राजपूत युवाओं और बुद्धिजीवियों में उनकी अच्छी छवि बन चुकी थी। उन्हीं दिनों जोधपुर में मारवाड़ राजपूत सभा की कार्यकारिणी की एक महत्त्वपूर्ण बैठक हुई जिसमें सचिव पद का चयन होना था। युवा वर्ग पू. आयुवान सिंहजी को सचिव बनाने के पक्ष में थे इसलिए युवाओं ने पूज्य श्री तनसिंहजी से बैठक में दो शब्द कहने व सचिव पद पर आयुवानसिंहजी का नाम प्रस्तावित करने का आग्रह किया। युवाओं के आग्रह पर जब पूज्य श्री तनसिंहजी माईक के पास गये तो एक भूतपूर्व जागीरदार ने उन्हें टोका, पर पूज्य श्री उनके टोकने के बावजूद भी माईक को हाथ में लेकर बोलने लगे तो उनसे माईक छीनने का प्रयास किया गया। इस पर बहुत से नव युवकों ने ऐतराज जताया और कार्यकारिणी पर दबाव बनाया, तब कहीं जाकर पूज्यश्री को बोलने दिया गया।

समाज में कुछ लोगों का दुर्व्यवहार, उनकी गलत नीतियाँ तथा गलत धारणा समाज में बिखराव व घृणा का वातावरण पैदा करती है। कुछ लोग अपने को महान व दूसरों को तुच्छ समझने का भ्रम पाले रहते हैं। पूज्य श्री तनसिंहजी का ऐसे ही एक महारथी से एक सामाजिक मंच पर सामना हुआ और दोनों के मध्य जो कुछ घटा, पूज्यश्री की जुबान से -

''मैं एक सभा की कार्यकारिणी का सदस्य लिये जाने वाला था, किन्तु तुमने मेरा इस बात पर विरोध किया कि, मैं एक निर्धन, साधनहीन हूँ, मेरे पास न मोटर है और न बंगला। समाज कार्य वही कर सकते हैं, जिनके पास ऐसे साधन हैं। मेरे जैसा निर्धन शहंशाहों की क्या सेवा कर सकता है?''

पूज्य श्री तनसिंहजी ने इस विरोध को एक कड़वे घूँट की भाँति पी लिया।

जयपुर राजपूत छात्रावास में पूज्यश्री ने शाखा शुरू की। वहाँ की प्रबन्धकारिणी नहीं चाहती थी कि श्री क्षत्रिय युवक संघ की (क्षात्र) प्रवृति इस छात्रावास में पनपे इसलिए प्रबन्धकारिणी ने यह आज्ञा प्रसारित कर दी थी कि श्री क्षत्रिय युवक संघ की (क्षात्र) प्रवृति उक्त छात्रावास या स्थान में नहीं चलने दी जाए और यह भी मनाही कर दी थी कि कोई इन्हें भोजन नहीं देगा। इस सम्बन्ध में पूज्य श्री तनसिंहजी ने कहा,-

''विचारों के प्रसार के लिए जितनी रोटी दाल की आवश्यकता नहीं, उतनी उस त्याग की जरूरत होती है जो भूख लगने पर बुझती नहीं, और भी अधिक सुलगती है। पन्द्रह दिन तक हमने सब्जियाँ उबाल कर खाई और उस स्थान पर सदा के लिये अपनी जड़ें जमा दी। तुम सहयोग देकर भी जो काम नहीं कर सकते थे, वह तुम्हारे विरोध ने कर दिखाया, इसलिए तुम्हारे प्रति हमारा क्षोभ नहीं, हम तो तुम्हारे चिर कृतज्ञ हैं।''

बाहरी विरोध के साथ पूज्य श्री तनसिंहजी को आन्तरिक विरोध भी झेलने पड़े। पूज्यश्री के निकट समझे जाने वाले कुछ लोग जिन्होंने साथ में रहने का भरोसा दिया, वादा किया, साथ रहने की लम्बी-चौड़ी बातें की, वे ही अपनी क्षुद्र-पद आकांक्षाओं, अपनी भ्रान्तिपूर्ण धारणाओं, अपनी कुछ सुविधाओं, अपनी तुच्छ स्वार्थवृति, लोभ-लालच और ईर्ष्या-द्वेष के वशीभूत होकर उनके विश्वास को खण्डित कर उन्हें आघात पहुँचाया, वादा-खिलाफी की, उन्हें धोखा दिया, उनके साथ छल किया। इन दगाबाजियों ने अपने ही कुटुम्ब के मुखिया से विद्रोह कर अपने ही इस बसे बसाये कुटुम्ब को अपने ही हाथों उजाड़ना, उस दरख्त को काटना शुरू किया जिसकी छाया में पनपे-संवरे, जिस बर्तन में भोजन किया उसी को फोड़ने लगे, जिसके कारण इज्जत व सम्मान मिला उसी के साथ नापाक हरकतें की, जिस घर ने हर तरह की सुख-सुविधा दी, पनपाया उसी घर की इज्जत पर डाका डाला। इस सम्बन्ध में पूज्य श्री तनसिंहजी ने जो कहा, उन्हीं की जुबानी-

''जिस बर्तन में भोजन करता हो, उसे जो फोड़ने में हिचकिचाता नहीं हो, जिससे आदर मिला हो उसी घर की इज्जत पर डाका डालने वाला क्या नहीं कर सकता? धन के लिये नहीं जो दो सौ रुपयों तक में गिरवी रखा जा सकता है, वह अपने स्वार्थ के लिये क्या नहीं कर सकता?''

कुछ भ्रमित लोगों ने पूज्य श्री तनसिंहजी की आलोचना की, उनका मखौल उड़ाया, उनका उपहास भी किया। पूज्यश्री ने सबको सहज भाव से स्वीकार किया और मुस्कराते हुए अपने साथियों को शान्त किया।

अनेकों लोगों ने उन्हें साम्यवादी बताया, तो अनेकों ने उन्हें बिड़ला का एजेण्ट बताया। किसी ने संघ को जागीरदारों के विरुद्ध किया गया प्रयास करार दिया, परन्तु हर प्रकार के विरोध में सहनशक्ति रखते हुए धैर्यपूर्वक अपने कार्य में निष्ठा व लग्न से लगे रहे। उनकी निष्ठा व लगन को देख धीरे-धीरे लोग जुड़ने लगे।

खूड़ ठाकुर साहब मंगलसिंह जी प्रारम्भ में पूज्य श्री तनसिंहजी के विरोधी व आलोचक थे, पर बाद में उनको अपनी भूल का अहसास हुआ तो उन्होंने कहा-

''ऐसा महापुरुष और योगी मैंने अपने जीवनकाल में दूसरा नहीं देखा।''

पूज्यश्री एक निश्चित लक्ष्य को लेकर आये थे और वे अपने लक्ष्य के अनुरूप आगे बढते गये। उन्होंने सभी विरोधों और असहयोग को दरकिनार किया और पूर्ण निष्ठा व तल्लीनता से अपना कार्य करने में लगे रहे। उन्हें कोई क्या कहता है, उनके बारे में कोई क्या सोचता है, बिना किसी पर ध्यान दिये वे आगे बढ़ते गये और आगे बढते हुए उन्होंने जो कहा, उन्हीं की जुबानी-

'लोक संग्रह में कठिनाइयों पर विजय पाने के लिये हमारी भीतरी प्रसन्नता ही साधन है। प्रसन्नता ऐसी विजय का बहुत बड़ा हथियार है। एक मुस्कराहट से शत्रु के अस्त्र को नीचे डलवा देना कितनी क्षमता का काम है, किन्तु प्रसन्नता के आगे सब कार्य आसान है। मैं अब आलोचनाओं की इसलिए भी परवाह नहीं करता कि मुझे मेरे मार्ग पर आगे बढना है और आगे बढने के लिये यह आवश्यक है कि पीछे रहने वालों की आवाजों पर ध्यान न दिया जाए। अपने विकास के लिए मैं अधिक चिन्तित हूँ और मैं यह सोचता हूँ कि स्वयं के

ऊपर उठे या आगे बढे बिना किसी को आगे बढाने या ऊपर उठाने की बात सोचना ही वृथा है।''

पूज्य श्री तनसिंहजी अपने लक्ष्य की ओर अनवरत बढते रहे और मार्ग में आने वाले विरोधों से अप्रभावित रहे। अपने मार्ग में आने वाले विरोधों से अप्रभावित रहने वाला ही अपने लक्ष्य की ओर अनवरत गति से बढ सकता है और पूज्यश्री अपने मार्ग में आने वाले विरोधों से अप्रभावित रहकर आगे बढते गये-बढते गये।

पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपने साथियों को सम्बोधित करते हुए कहा-

''महान कार्य को करने वालों के सामने ईर्षालु लोग हमेशा उनकी आलोचनाएँ करते हैं। आलोचनाएँ हमारे अन्तर को छुए तक नहीं। हमें तो केवल इतना ही देखना है कि आलोचनाओं के होते हुए भी हमारा कार्य ठीक है या नहीं, और यदि ठीक है तो फिर उसमें लोक दिखावा और लोक व्यवहार के प्रश्न को खड़ा ही नहीं करना चाहिये।''

पूज्य श्री तनसिंहजी ने आगे कहा-

''ऊँखल में सिर जिसने दिया है, उसे मूसल की बिल्कुल ही चिन्ता नहीं करनी चाहिए। जिसने समाज जागरण का काम अपने हाथ में लिया है, उसका निजी मान और अपमान कुछ अर्थ ही नहीं रखता। उसे तो सर्दी-गर्मी, वर्षा-आँधी में तीर की भाँति आगे बढना चाहिए और एक दिन वह देखेगा कि सारा संसार उसके चरणों पर लोट रहा है।

''जो मान से फूले नहीं और अपमान से लज्जित न हो, गर्मी से घबराए नहीं और सर्दी से विचलित न हो, सुख में अभिमान न करे और दुःख में निराश न हो तथा संसार में आसक्त न हो, यदि यह सभी गुण कोई व्यक्ति अपने में विकसित कर लेता है, तो उसके सामने पराजय का प्रश्न ही नहीं है।''

पूज्य श्री तनसिंहजी की सफलता का क्या राज था, यह उनके विरोधी नहीं जानते, पर किसी प्रवृति को गति देने के लिये विरोध आवश्यक है। कृतघ्न लोगों के विरोधी रवैये पर पूज्य श्री तनसिंहजी ने कहा-

''तुम्हारा यह विरोध हमारे लिये सबसे बड़ा वरदान बनेगा।''

जीवन में आने वाले विरोध के सम्बन्ध में पूज्य श्री तनसिंहजी ने कहा-

''विरोध केवल प्रकृति की उसके पुत्र के लिए परीक्षा नहीं, वह अपनी सन्तान के लिये प्रेम पूर्ण उपहार है। बिना अवरोध के चलने वाली कोई धारा सहज गति से ही चलती रहेगी। विरोध उस धारा में रुकावट अवश्य पैदा करता है, किन्तु विरोध को पार करने पर उस धारा को सहज गति से भी अधिक द्रुत गति अपने लक्ष्य साधन के लिए मिलती है। जीवन में गति लाने के लिये विरोध होना आवश्यक है।''

पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपने विरोधियों और आलोचकों को सम्बोधित करते हुए कहा-

''तुम्हारे विरोध ने हमारा नुकसान पहुँचाने की अपेक्षा लाभ ही किया। तुम नहीं मानोगे किन्तु यह सत्य है कि विरोध हमारे लिए आवश्यक है। वह परेशानी देता है, उन लोगों को जिनकी फल के प्रति आसक्ति है किन्तु वह प्रेरणा भी देता है, हमारी प्रसुप्त शक्तियों को जागृत भी करता है।''

(क्रमशः)

पुरुषार्थी पुरुष सर्वत्र भाग्य के अनुसार प्रतिष्ठा पाता है। परन्तु जो अकर्मण्य है, वह सम्मान से भ्रष्ट होकर घाव पर नमक छिड़कने के समान असह्य दुख भोगता है।

- महर्षि वेदव्यास

अप्रेल अंक से आगे

पृथ्वीराज चौहान

– विरेन्द्रसिंह मांडण (किनसरिया)

पृथ्वीराज और गोरी के मध्य पहला युद्ध सतलज घाटी 1182–83 ई. (भाग–1)

अब तक हमने देखा कि पृथ्वीराज जेजाकभुक्ति प्रदेश में किए अपने अभियान से लौटे और उसी समय गोरी सिंध में अपने पाँव पसार रहा था।

फिर वही हुआ जो दोनों के वर्चस्व की फैलती परिधियों को देख होना तय था–टकराव।

इस टकराव पर सबसे विस्तृत जानकारी हमें हम्मीर महाकाव्य[1] से मिलती है। उसकी संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार है :

जब पृथ्वीराज विजयश्री और सुशासन के प्रतीक बने हुए थे, तब गोरी भी अपना प्रभाव बढा रहा था। उसने अपनी राजधानी मुल्तान[2] से आतंक और विध्वंस का ऐसा चक्रवात पैदा कर दिया था जिसके आगे महिलाएँ, बच्चे, धन, मन्दिर कुछ नहीं बचा। कोई भी सशस्त्र क्षत्रिय दिखने पर उस म्लेच्छ की सेना तुरन्त मार डालती थी। उसके दमन से विवश होकर पश्चिम के कई राजा लोग चंद्रराज के नेतृत्व में पृथ्वीराज से मिलने आए। लोकाचार की औपचारिकताओं के बाद जब सभी बैठे तो पृथ्वीराज ने उनके मुरझाये हुए मुख देखकर प्रश्न किया। चंद्रराज ने पूरा वृत्तान्त पृथ्वीराज को सुना दिया और सहायता माँगी। तब क्रोंध से तमतमाए अजमेर नरेश ने प्रण लिया कि मैं गोरी को अपने समक्ष घुटने टेकने पर विवश कर दूँगा। शीघ्र ही एक चतुरंगिणी (गज, उष्ट्र, अश्व और पैदल) सेना एकत्र कर चौहान शिरोमणि ने मुल्तान की ओर कूच किया। यह देखकर गोरी भी अपनी सेना सहित आगे आया। संग्राम में दोनों ओर के अनेकों वीर काल को प्राप्त हुए और अन्त में पृथ्वीराज विजयी रहे। जीतने के बाद पृथ्वीराज ने बंधक गोरी से घुटने टिकवाये और उसे तभी छोड़ा जब गोरी ने पृथ्वीराज को नियमित कर देने की माँग स्वीकार की (व्याख्या समाप्त)।

महाकाव्य के इस वर्णन में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मिलने वाले लोग स्वयं राजा थे और पृथ्वीराज के ही कोई सामन्त नहीं थे।

ग्रन्थ में युद्ध स्थल की सटीक पहचान नहीं हुई है, पर कथानक और भूगोल से मोटा अनुमान मिल ही जाता है। पृथ्वीराज ने पहल करते हुए सेना मुल्तान की ओर बढ़ाई तो गोरी भी मुल्तान से आगे आया।

सो युद्ध स्थल जैसा कि विंध्यराज जी का मत है, पश्चिमी सीमा (बीकमपुर)[3] और मुल्तान के बीच सतलज की घाटी में ही कहीं होगा। महाकाव्य आगे लिखता है कि इतनी बुरी पिटाई के बाद अपमान से जलते गोरी ने प्रतिशोध लेने का 7 बार और प्रयास किया लेकिन हर बार में परास्त हुआ। आठवें प्रयास में गोरी विजयी रहा जो कि तराइन की दूसरी लड़ाई है।

गोरी से पृथ्वीराज द्वारा कर वसूलने की बात हम्मीर महाकाव्य ही नहीं अपितु पृथ्वीराज प्रबंध में भी लिखी है। प्रबन्ध के अनुसार पृथ्वीराज का प्रतापसिंह नामक एक मंत्री (प्रबंध के उन तीन द्रोहियों में पहला) नियमित रूप से कर वसूलने गजनी जाया करता था। गोरी से हाथ मिलाकर वो कर में मिला धन वहीं व्यय करने लगा। कर की उगाही में हेराफेरी पर प्रतापसिंह से विवाद ही कदम्बावास की मृत्यु का मूल कारण बना।[4]

कल्पसूत्र की पुष्पिका और फलौदी माता मंदिर के एक जीर्णोद्धार शिलालेख का साझा कथन है कि–

''डाहलदेश (जबलपुर, मध्यप्रदेश के पास) के राजा मधुदेव परमार का पुत्र सूरसिंह पृथ्वीराज चौहान के आदेश पर म्लेच्छों से कर वसूलने गया और उनसे

विवाद होने पर अकेले 74 योद्धाओं को मार वीरगति को प्राप्त हुआ।''[5]

शिलालेख की एक पंक्ति में ''गर्जना द्वार्षिकं दण्डं लातुमितो'' से स्पष्ट हो जाता है कि यह कर उगाही नियमित होती थी। शिलालेख का सूरसिंह कोई अज्ञात व्यक्तित्व नहीं, जैन इतिहास में उसका प्रचुर वर्णन मिलता है। अगरचन्द नाहटा जी ने लौंकागच्छ पट्टावली से जो तथ्य निकाले उनसे ज्ञात होता है कि-

''सूरसिंह परमार के दो पुत्र थे-मोलन और श्यामेन्द्र। मोलन ने श्वेताम्बर धर्मघोष सूरि से जैन धर्म की दीक्षा ली। उसने मोरखानो, बीकानेर का सुसाणी माता मन्दिर बनवाया। उसके जैन वंशज जो नागौर में बसे, सूरसिंह से सुराणा गोत्र के कहलाये।''[6]

यही वंशावली सुसाणी माता मन्दिर के 1516 ई. के शिलालेख से भी ज्ञात होती है।[7] सुसाणी माता सुराणाओं की कुलदेवी भी है।

विंध्यराज जी का अनुमान ठीक लगता है कि कर उगाही के लिये प्रतापसिंह की नियुक्ति सूरसिंह की मृत्यु के बाद ही की गई होगी।[8]

इस युद्ध प्रसंग की ऐतिहासिकता का आंकलन करना होगा, और इसके लिये पक्ष व विपक्ष दोनों प्रकार के तर्क देखेंगे।

समर्थन में दिए गए तर्क :

1. अनेकों भारतीय स्रोत एकमत से यह कहते हैं कि पृथ्वीराज ने गोरी को कई बार हराया-प्रबंध कोष (20 बार), पुरातन प्रबंध संग्रह (7), हम्मीर महाकाव्य (7), सुर्जन चरित (21) और साथ ही प्रबंध चिंतामणि (23) जो कि पृथ्वीराज की मृत्यु के 100 वर्ष बाद ही लिखी गई है। यहाँ परास्त करने की संख्या में अतिशयोक्ति हुई है यह बात तो प्राय: सभी मानते हैं, पर इतने स्रोतों में इस बात पर एका होना कि पृथ्वीराज ने गोरी को अनेकों बार परास्त किया, यह बताता है कि कम से कम एक बार तो गोरी को पृथ्वीराज ने जीवित पकड़ कर छोड़ दिया था।

तराइन-1 पर जितने भी इस्लामी स्रोत लिखते हैं उनमें भी इस विषय पर एका है कि उस युद्ध में गोरी घायल किन्तु जीवित बाहर आ गया था। अब या तो सभी इस्लामी स्रोत झूठ बोल रहे हैं या फिर ये पकड़ा जाना और छूटना तराइन नहीं अपितु सतलज युद्ध का वृत्तान्त है जो गड्डमड्ड इतिहास में तराइन पर चस्पा कर दिया गया है।

2. भारतीय ग्रंथों पर यदि तुरन्त विश्वस न हो, तो उनका समर्थन एक शिलालेख (फलौदी मंदिर) भी करता है।

3. शिलालेख का मुख्य विषय पृथ्वीराज नहीं थे सो महिमामण्डन के लिये कुछ भी कहे जाने की सम्भावना नहीं रहती। शिलालेख की राजनैतिक व धार्मिक सूचना अन्य स्रोतों से मेल खाती है। सो इसे अपवाद के विवाद में नहीं डाला जा सकता।

4. सूरसिंह परमार द्वारा 74 योद्धाओं को मार कर वीरगति लेने की स्मृति उनके वंशजों में इतनी गहरी है कि ये सदियों से चलती एक सुराणा जैन परम्परा में परिलक्षित होती है जहाँ 74 की संख्या को श्रद्धा से कोई भी पत्र कागज लिखते समय सबसे ऊपर अंकित किया जाता है।

5. तराइन के दोनों युद्ध कुछ समानताएँ रखते हैं जैसे दोनों बार उसी सरहिंद की चौकी पर कब्जे होना, एक ही युद्धस्थल, और गोरी का दोनों बार युद्ध के लिये लाहौर से ही प्रस्थान करना। पर हम्मीर महाकाव्य वर्णित युद्ध के दिनों तो गोरी मुल्तान से देबल के बीच व्यस्त था और युद्ध के लिये भी मुल्तान से ही (दक्षिण पूर्व को) निकला। यह तथ्य सभी ऐतिहासिक संरचना में ठीक बैठता है जब युद्ध को सतलज 1182-83 ई. में

(शेष पृष्ठ 17 पर)

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

– भँवरसिंह मांडासी

अजमेर में राजनैतिक बन्दी व मुकुदमा :

27 अगस्त, 1915 को प्रात: किशनगढ़ पहुँचकर, वहाँ से रेल द्वारा राव गोपालसिंह अजमेर पहुँचे। अजमेर नगर की जागरूक जनता उनके दर्शनार्थ समुद्र की लहरों की भाँति उमड़ पड़ी। रेल्वे यार्ड के सामने का विस्तृत चौड़ा जनपथ, घण्टाघर और आस-पास के गली-बाजार जन-समूह से खचाखच भरे हुए थे। अजमेर रेल्वे स्टेशन पहुँचने से पूर्व ही जिला कमिश्नर ए.टी. होम अन्य अंग्रेज अधिकारियों के साथ राव गोपालसिंह को लेने के लिये रेल्वे स्टेशन पहुँच गया था। रेल से उतरते ही उन्हें दो घोड़ों की बग्गी में अपने साथ बैठाकर नया बाजार स्थित ''मैगजीन'' भवन ले गया। राजनैतिक बन्दी की भाँति उन्हें वहाँ रखा गया। उनके पुराने सेवक लक्ष्मीनारायण को खरवा से बुलाकर उनकी सेवा हेतु रहने की इजाजत दे दी गई।

भारत रक्षा कानून के तहत नजरबन्दी तोड़ने के अपराध में उन पर मुकुदमा चलाया गया। राजपूताना के ए.जी.जी. सर इलियट कॉल्विन के आदेश दिनांक 18 सितम्बर, 1915 के अनुसार अजमेर के जिला कमिश्नर ए.टी.होम ने जिला मस्जिट्रेट की हैसियत से राव गोपालसिंह के मुकुदमें की सुनवाई की। और उन्हें दो वर्ष के कारावास की सादी सजा सुनाई। (Judgement Date 12.10.1915) इस मुकुदमे की पैरवी इलाहाबाद के प्रसिद्ध वकील सत्यचरण मुखर्जी ने की थी। सहायक वकील के रूप में अजमेर के बैरिस्टर गौरीशंकर ने भी सहयोग दिया।

राव गोपालसिंह जब अजमेर में दो साल की सजा भुगत रहे थे, उसी समय के अन्तराल में उन्हें काशी-षड़यंत्र केस में तलब किया गया, जिसकी सुनवाई 5 नवम्बर, 1915 को होने वाली थी। राव गोपालसिंह को 3 नवम्बर, 1915 को ही अजमेर से काशी भेज दिया गया। काशी-षड़यंत्र केस की सुनवाई के लिये एक स्पेशल ट्रिब्यूनल बनाया गया था जिसके प्रेसिडेन्ट S.R.D. Danils erqr I.C.S. थे। राव गोपालसिंह के श्वसुर राजा साहब शिवगढ़ (यू.पी.) द्वारा नियुक्त लखनऊ के एक प्रसिद्ध वकील ने ट्रिब्यूनल के समक्ष उनके केस की पैरवी की। इस केस की सुनवाई से पूर्व ही सरकारी वकील ने ट्रिब्यूनल के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया कि ''सरकार ठाकुर गोपालसिंह खरवा पर से बनारस-षड़यंत्र केश का मुकदमा उठा रही है।'' सरकार ने ऐसा क्यों किया? उसके पिछे क्या कारण रहा होगा? इस सम्बन्ध में आम चर्चा तो यह प्रचारित हुई थी कि सरकार के पास राव गोपालसिंह के विरुद्ध काशी-षड़यंत्र का अभियोग सिद्ध करने हेतु पर्याप्त प्रमाण प्राप्त नहीं हुए थे। सरकारी सूत्रों के निकटवर्ती व्यक्तियों का मानना था कि राजपूताना के इन्सपेक्टर-जनरल पुलिस ने सलेमाबाद के घेरे के समय राव गोपालसिंह को लिखित में आश्वासन दिया था कि उनके खिलाफ काशी-षड़यंत्र केस चलाने की सम्भावना नजर नहीं आती। उसी आश्वासन को मानकर राव गोपालसिंह मन्दिर से बाहर आने को तैयार हुए थे। अंग्रेज सरकार के दिल्ली स्थित राजनैतिक विभाग ने भी सम्भवत: अपने एक उच्च पदस्थ अंग्रेज अधिकारी के वचन की साख बनाए रखने हेतु राव गोपालसिंह पर से उक्त अभियोग उठा लेने का निर्णय लिया था।

प्रसिद्ध पत्रकार गणेश शंकर विद्यार्थी कानपुर से प्रकाशित ''प्रताप'' पत्र के सम्पादक थे। उक्त पत्र में क्रान्तिकारियों के कार्यों और सरकार द्वारा उन पर किए जा रहे जुल्मों के समाचार ही अधिक प्रकाशित होते थे। खरवा राव गोपालसिंह की काशी-षड़यंत्र के अभियोग से मुक्ति के संदर्भ में उक्त पत्र 15 नवम्बर, 1917 का सम्पादकीय लेख पठनीय है-''बनारस-षड़यंत्र अभियोग में राव गोपालसिंह के छुटकारे के लिये सरकारी वकील की तरफ से अदालत को दरख्वास्त पेश करने का कारण यह था कि राजपूताना में राव साहब के पकड़े जाने के समय राजपूताना ऐजेन्सी के एक उच्चपदस्थ सरकारी अफसर ने कुछ बातें ऐसी कही थीं जिनसे राव साहब ने यह समझ लिया कि उन पर मुकुदमा नहीं चलेगा या यह कि ये बातें उन पर मुकुदमा न चलाने के वचन स्वरूप थी। संयुक्त प्रान्त की सरकार उन बातों को नहीं जानती थी और न उसके हुक्म से ही वे हुई थीं, और जिस अफसर ने राव साहब से वे बातें कही थीं, उसका मतलब भी यह नहीं था कि वे अभयदान तुल्य समझी जायें। 26 अगस्त, 1915 को जब राव गोपालसिंह को सलेमाबाद में घेरा गया था, काशी-षड़यंत्र वाली तहकीकात शुरू भी नहीं हुई थी और उस अफसर को जिसने राव गोपालसिंह से शर्तें की थी-उन तथ्यों का पता भी नहीं था, जो संयुक्त-प्रान्त में हो रही थीं। फिर भी सरकार को यह जान पड़ा कि सरकार के एक जिम्मेवार अधिकारी की बातों के सम्बन्ध में वचन भंग का संदेह उत्पन्न न हो। अत: एक अंग्रेज अधिकारी के वचनों की प्रतिष्ठा और साख बनाए रखने के लिये गवर्मेन्ट ने राव गोपालसिंह पर से मुकुदमा खारिज करने की दरख्वास्त दी थी। ट्रिब्यूनल से दरख्वास्त करने में जो देर हुई, उसका कारण यह था कि प्रान्तीय सरकार को दिए गये वचन की बात सरकार को अभियोग चलाने के थोड़े दिनों बाद मालूम हुई और सरकार ने सही बात जानने के लिये अजमेर सरकार से पूछा कि असल में क्या वचन दिया गया था और किस अवस्था में दिया गया था। काशी-षड़यंत्र अभियोग शुरू होने के समय राव साहब सरकारी आज्ञा तोड़ने के अपराध में कारावास में सजा भोग रहे थे। अत: जब वे काशी-षड़यंत्र केस से मुक्त हुए तो उन्हें राजपूताना की पुलिस के सुपुर्द कर दिया गया।''

बनारस-षड़यंत्र अभियोग से मुक्त होने के पश्चात राव गोपालसिंह को भारत रक्षा कानून के तहत दी गई सजा की शेष अवधि समाप्त होने तक अजमेर जेल में रखा गया। उक्त सजा की अवधि समाप्त होने पर उन्हें मुक्त कर देना आवश्यक था। परन्तु भारतवर्ष में अभी पूर्णरूपेण शान्ति स्थापित नहीं हुई थी। ऐसी अवस्था में सरकार के राजनैतिक विभाग ने राव गोपालसिंह जेसे प्रभावशाली और लोकप्रिय राजनैतिक व्यक्ति का जनता के बीच रहना खतरनाक समझा और उन्हें भारत रक्षा कानून (Defence of India Act) के अन्तर्गत पुन: नजरबन्द कर दिया गया। (4 सितम्बर, 1917)

उसी समय (1916 ई.) में खरवा के कुंवर गणपतसिंह कलकत्ता में तत्कालीन भारतीय कांग्रेस की अध्यक्षा श्रीमती एनीबिसेन्ट से मिले थे। एनेबिसेन्ट का नाम उस समय भारतीय राजनैतिक आकाश में नक्षत्र की भाँति चमक रहा था। यह 'Home-Rule' आन्दोलन की संचालिका थी। कुंवर गणपतसिंह खरवा के साथ हुए वार्तालाप का हवाला उद्धृत करते हुए ऐनीबिसेन्ट ने वायसराय लार्ड हार्डिंग को अपने हाथ से लिखे एक नोट में राव गोपालसिंह को जेल से रिहा करने की सिफारिश की थी। (केन्द्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली में राव गोपालसिंह की नजरबन्दी फाईल में) श्री फतेहसिंह मानव के सौजन्य से प्राप्त सूचना साभार प्रस्तुत उद्धृत की गई है। अंग्रेज सरकार को नजरबन्दी की

हालत में भी राव गोपालसिंह को अजमेर या राजपूताना में किसी भी स्थान पर रखना अभिष्ट नहीं था। इसलिए नजरबन्दी आदेश के पाँच माह पश्चात ही उन्हें ''तिलहर' नामक स्थान पर स्थानान्तरित कर दिया गया। (4 मार्च, 1918) तिलहर उत्तरप्रदेश के शाहजापुर जिले में एक प्रसिद्ध स्थान है।

''खरवा ठिकाने पर कोर्ट ऑफ वार्डस''

राव गोपालसिंह के टॉडगढ़ से फरार हो जाने के पश्चात् खरवा ठिकाने पर सरकार ने अधिकार कर लिया था। पोलिटिकिल डिपार्टमेन्ट के सलाह मशविरे के बाद ए.जी.जी. राजपूताना ने अजमेर कमिश्नर को खरवा को कोर्ट ऑफ वार्डस के प्रबन्ध में ले लेने का आदेश दिया। 24 जुलाई, 1915 को ए.जी.जी. के प्रथम असिस्टेन्ट बी.जे. ग्लान्सी ने कमिश्नर अजमेर-मेरवाड़े को लिखा-"Regarding the kharwa estate, I am directed to forward for your information a copy of the letter noted is the margin from the Hon'ble chief commissioner to the government of india in the Foreign and Political department recommedning that until final orderes should be passed with regard to Thakur Gopalsingh the commissioner of Ajmer should be empowered to undertake the temporary administration of the estate."

उपरोक्त आदेश की राव गोपालसिंह के पुत्र कु. गणपतसिंह को सूचना देते हुए कमिश्नर ने लिखा-''चीफ कमिश्नर के आदेश से खरवा ठिकाने का प्रबन्ध कमिश्नर के अधीन ले लिया गया है और मुंशी चांदमल भण्डारी को 1 अगस्त, 1915 को वहाँ का मैनेजर नियुक्त कर दिया गया है। (पत्र दिनांक 29.7.15)

राव गोपालसिंह को दो वर्ष तक ''तिलहर'' स्थान पर नजरबन्द रखा गया (फरवरी सन् 1918 से मार्च, 1920 तक) वहाँ पर भी खुफिया विभाग की उन पर कड़ी निगरानी रही। फिर भी देश के गणमान्य व्यक्ति उनसे मिलने वहाँ जाते रहते थे। अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिलब्ध विद्वान महा पण्डित राहुल सांस्कृत्यायन 12 अप्रेल, 1919 को राव गोपालसिंह से मिलने गये थे। ''मेरी जीवन यात्रा'' पुस्तक में उक्त वार्तालाप का उल्लेख राहुल जी ने इन शब्दों में किया है-

''खरवा के राव साहब (गोपालसिंह) उस समय तिलहर के डाक बंगले में नजरबन्द थे। अभिलाष उनसे एक-आध बार मिले थे। मुझे मालूम होने पर मैं भी मुलाकात करने का इच्छुक हो गया। हम दोनों राव साहब के बंगले पर गए। अभिलाष ने अपना साथी नौजवान कहकर मेरा परिचय दिया। राव साहब ने हिम्मत की परीक्षा लेने के लिये पूछा-''आपको कोई उजर तो नहीं होगा-यदि मैं पुलिस को बतलाने के लिये आपका नाम नोट कर लूँ। नजरबन्दी में मेरे लिये यह जानना जरूरी है।''

मैंने साफ तौर से कहा-''नहीं, कोई उजर नहीं-आप जरूर नोट कर लें।'' राव साहब की बातों में अंग्रेजों के प्रति भयंकर विद्वेष भरा था। उन्होंने कुछ स्वरचित कविताएँ सुनाई, जिनमें एक का अंश अब भी याद है-''गोरांग गण के रक्त से, निज पितृगण तरपण करूँ।'' (मेरी जीवन यात्रा पृष्ठ 315) तिलहर में दो वर्ष नजरबन्दी जीवन बिताने के पश्चात मार्च सन् 1920 में सार्वजनिक क्षमा (शाही माफी) का आदेश प्रसारित होने पर उन्हें भी मुक्ति मिली।''

आम माफी के अन्तर्गत नजरबन्दी से मुक्ति के पश्चात भी गवर्मेन्ट की इच्छा राव गोपालसिंह के खरवा प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाने की थी। उससे कुछ समय पूर्व ही मुंशी चाँदमल को हटाकर राव गोपालसिंह के पुत्र कुँ. गणपतसिंह को खरवा का मैनेजर बना दिया गया था। गवर्मेंट की इच्छा का आभास होते ही कुँवर गणपतसिंह ने कमिश्नर अजमेर से आग्रह किया कि राव गोपालसिंह के खरवा प्रवेश

पर प्रतिबन्ध लगाने की हालत में उनके कुँवर का खरवा के मैनेजर पद पर कार्य करते रहने का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। अत: उन्हें भी पदमुक्त कर दिया जावे। गवर्मेन्ट को शंका थी कि खरवा आ जाने पर राव गोपालसिंह मैनेजर को निर्विघ्न कार्य नहीं करने देंगे। कमिश्नर अजमेर की सिफारिश पर गवर्मेन्ट ने राव गोपालसिंह के खरवा प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाने का विचार त्याग दिया और कुँवर गणपतसिंह को भी मैनेजर बने रहने के लिये राजी कर लिया। तात्कालिक परिस्थिति को समझकर राव गोपालसिंह ने कोर्ट ऑफ वार्डस बने रहने की शर्त को मंजूर कर लिया। (खरवा रेकार्ड की पत्रावली)

साभार : **'राव गोपालसिंह खरवा'**

लेखक : **सुरजनसिंह झाझड़** **(क्रमश:)**

पृष्ठ 7 का शेष

चलता रहे मेरा संघ

होती। शिविर का आयोजन मुझे शिक्षा देने के लिये है, यह मानकर चलें। यहाँ समूह में रहते हुए भी अकेले रहने का अभ्यास करें। बात मेरे लिये कही गई है और मुझे वैसा ही करना है जो कहा गया है। यही अकेले रहने का अर्थ है कि मेरे लिये ही कहा गया है-यही लेकर चलें। तभी परिवर्तन आना सम्भव है। यह अमृत स्वयं को ही पीना है, अगर हम नकार देंगे तो यह बिखर जाएगा। सावधानी स्वयं के लिये रखनी है।

संघ हमारे जीवन में बदलाव देखना चाहता है। हम दोनों को एक लक्ष्य की ओर खींचना चाहता है। यह कहानी कहने से, सुनने से नहीं, करने से होगा। राम और सीता वन में थे। वनवासियों ने कहा-भाग्यवान है सीता कि राम के अभियान में सहभागीनि बनी है। आप भी अपने पति के अभियान में सहभागी बनें। इस अभियान को सही ढंग से समझाने के लिये आपको यहाँ शिविर में बुलाया गया है। आपको लगता हो कि एक महत् कार्य के लिये ये लोग लगे हुए हैं तो सहयोग दीजिए, अन्यथा वह कार्य पूरा नहीं होगा। इसे ठीक महसूस करती हैं तो आप कैसे उसमें सहयोग कर सकते हैं, ठीक लगता है तो अब समरसता आनी चाहिए। हमारे जीवन की असम्भावनाएँ अब समाप्त होनी चाहिये।

मेरी घुसपैठ अब परिवार में होने लगी है और मुझे लगता है कि अच्छे परिणाम आने लगे हैं। गति संघ की बढी है। अत: भूल न करें, सावधानी रखें, यह अच्छा है। पूरे दिन में गफलत न हो तो बेड़ा पार हो जाए। मुझे आनन्द आ जाए। मैं सबको व्यक्तिगत रूप से कह रहा हूँ। महिला, पुरुष सभी को; यह मानें केवल उसी को व्यक्तिगत कह रहा हूँ।

पृष्ठ 13 का शेष

पृथ्वीराज चौहान

रखा जाए क्योंकि तब गोरी का लाहौर पर अधिकार ही नहीं था कि तराइन की ओर जाया जा सके।

6. मध्य युग के सेनापति अपने जीवन में बहुत से युद्ध देखते थे, कुछ में जीत तो कुछ में हार का क्रम चलता रहता था। तो ऐसा क्या हुआ कि गोरी तराइन-1 की एक ही हार के बाद प्रतिशोध में इतना विक्षिप्त हो गया कि दिन, रात और वत्रों का भी भान नहीं रहा। इस प्रतिक्रिया का स्पष्टीकरण तभी अच्छा मिलता है जब तराइन-1 एक दोहराई हुई हार हो (सतलज के बाद)।

उद्धरण : 1. सर्ग-03, श्लोक 01-48, 2. यह गोरी का स्कन्धावार/छावनी स्थल था जहाँ से उसने अभियान चलाये। इसी कारण कवि ने मुल्तान को राजधानी कह दिया है, 3. 1179 ईस्वी का कल्याणराय शिलालेख स्पष्ट करता है कि बीकमपुर पृथ्वीराज चौहान के राज्य का भाग था। तब वहाँ के स्थानीय शासक कतिया सांखला थे, 4. पुरातन प्रबंध संग्रह, सिंघी जैन ग्रंथमाला, पृ. 86, 5. प्रबंध चिंतामणि, पृ. 124, 6. बीकानेर जैन लेख संग्रह, पृ. 100, 7. वही, पृ. 370, 8. दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहान एवं उनका युग-विंध्यराज चौहान, प्र. राजस्थानी ग्रंथागार, सोजती गेट, जोधपुर

लक्ष्मी, कर्म, धर्म और सच

– गोविन्दसिंह कसनाऊ

एक सेठ अपने शयनकक्ष में सोया हुआ था। लगभग प्रात: के 4 बजे थे। सेठ को एक स्वप्न आया। सेठ को अपने सामने एक देवी दिखाई दी। देवी ने सेठ से प्रश्न किया ''सेठ सो रहे हो या जग रहे हो?'' सेठ ने उत्तर दिया। ''मैं अर्द्ध निद्रा में हूँ, न जग रहा हूँ और न ही सो रहा हूँ।'' देवी ने सेठ से पूछा ''मुझे पहचानो, मैं कौन हूँ?'' सेठ ने उत्तर दिया ''मैं नहीं पहचानता देवी तुम्हें। आप स्वयं अपना परिचय दीजिए।''

देवी बोली–''मैं लक्ष्मी हूँ। मैं तुम्हारे पास बहुत समय तक रही। फिर भी तुमने मुझे नहीं पहचाना। तुम्हारे पास जो धन दौलत है, वह मैं हूँ। परन्तु अब मैं तुम्हारे यहाँ से जा रही हूँ। मैं तुम्हें सचेत करने आई हूँ। तेरे कल–कारखाने, दुकानें, सोना–चाँदी आदि सब बिक जाएँगे।''

सेठ ने हाथ जोड़कर निवेदन किया ''देवी आप मेरे पास ही निवास करो। यदि मेरे से कोई गलती हुई हो तो मुझे क्षमा करो।'' देवी (लक्ष्मी) ने उत्तर दिया–''अब मैं तेरे पास किसी भी शर्त पर नहीं ठहरूँगी।'' सेठ खड़ा हुआ और दवी को अपने घर के दरवाजे तक ले गया और हाथ जोड़कर लक्ष्मी को विदा किया।

सेठ को पुन: एक महाशय सामने खड़े दिखाई दिये। महाशय ने भी लक्ष्मी की तरह सेठ से वही प्रश्न किया। ''सेठ मुझे पहचानो मैं कौन हूँ?'' सेठ ने उत्तर दिया–''मैं महाशय आपको नहीं पहचान पा रहा हूँ, आप स्वयं अपना परिचय दीजिए।'' महाशय ने उत्तर दिया ''मुझे कर्म कहते हैं आपके जो कल–कारखाने चल रहे हैं, जगह–जगह दुकानें चल रही हैं, वह मैं ही हूँ। लक्ष्मी तुम्हारे यहाँ से चली गई। इसलिए अब इन सब में आपको घाटा लगेगा। हानि होगी और ये दुकानें, कल–कारखाने बंद होकर बिक जाएँगे। मैं तुम्हारे यहाँ से जा रहा हूँ। मैं तुम्हें सचेत करने आया हूँ।'' सेठ ने कर्म को रुकने का निवेदन किया परन्तु कर्म नहीं माना। सेठ ने खड़े होकर कर्म को घर के दरवाजे पर हाथ जोड़कर विदा किया।

सेठ को पुन: अपने सामने एक महाशय खड़े दिखाई दिये। महाशय ने भी वही प्रश्न पूछा और सेठ ने भी वही उत्तर दिया जो लक्ष्मी और कर्म को दिया था। महाशय बोल ''मुझे धर्म कहते हैं। सेठ तुम जगह–जगह धर्मशालाएँ बना रहे हो, अस्पताल बना रहे हो, पानी पीने के लिये प्याऊ बना रहे हो। विद्यार्थियों के पढ़ने के लिये गाँव–गाँव में विद्यालय भवन बनवाकर सरकार को दे रहे हो। सार्वजनिक पुस्तकालय बनवा रहे हो, वह सब कुछ मैं ही हूँ। लक्ष्मी और कर्म यहाँ से चले गये। इसलिए मैं भी यहाँ से जा रहा हूँ। मैं तुम्हें सचेत करने आया हूँ।'' सेठ ने हाथ जोड़कर धर्म को विदा किया।

सेठ ने पुन: अपने सामने एक महोदय को खड़ा देखा। उस महोदय ने अपना परिचय दिया और सेठ को बताया–''मुझे सच कहते हैं। सेठ तुम्हारे मुँह से जो भी शब्द निकलते हैं, लोग कहते हैं, सेठ सच बोलता है। इसलिए दूर–दूर तक तुम्हारी प्रशंसा हो रही है। लक्ष्मी, कर्म और धर्म यहाँ से चले गये। अब मैं भी तुम्हारे यहाँ से जा रहा हूँ। मैं तुम्हें सचेत करने आया हूँ सेठ कि अब पहले सोचना दो बार और फिर बोलना। फिर भी लोग कहेंगे, सेठ झूठ बोल रहा है।''

सच की बात सुनकर सेठ खड़ा हुआ और सच

(शेष पृष्ठ 22 पर)

गतांक से आगे

दाता ने कहा था

– औंकारसिंह 'सात्यकि' हरिपुरा

भँवर सामान लेने शहर गया। सामान गाँव भिजवाकर जिला कलेक्टर के कार्यालय चला गया। एक आवश्यक कार्य निपटाना जो था। वहाँ से सीधा गाँव आ गया। तीन दिन पश्चात वह काकीसा, भुवासा और दो धड़े के बाबोसा को लेकर हरिद्वार चला गया। जाने से पूर्व वह माँसा, काकोसा और विश्वस्त व्यक्तियों को विरोधियों की चालों से सतर्क रहने की हिदायत देना नहीं भूला।

हरिद्वार से लौटने पर उसने देखा कि सब कुछ व्यवस्थित तरीके से संपन्न हो रहा है। सभी रिश्तेदार, मेहमान व कोटड़ियों के सिरदार आने लग गये थे। किसी सहृदय, भले और पूरी उम्र भोग कर जीवन यात्रा पूरी करने वाले व्यक्ति के पीछे जो श्रद्धा भरी भावनाओं का मेला लगता है वैसा ही वातावरण यहाँ नजर आ रहा था। पूरे परिवार में संतोष की भावना नजर आ रही थी। सुबह द्वादशे का भोजन शुरू हो गया। लोग आते जा रहे थे। सारी व्यवस्था रावले के निकट धर्मशाला में की गई थी। भोजन चल रहा था कि वहाँ पुलिस जीप आकर रुकी। करणसिंह आशंकित हो उस तरफ बढ़े। थानेदार उन्हें देख सावधान की मुद्रा में खड़ा होकर बोला, ''सर! आपके विरुद्ध मृत्युभोज करने की शिकायत दर्ज करवायी गयी है, हमें भोजन सील करके आपको हिरासत में लेने का आदेश स्वयं एस.पी. साहब ने दिया है।'' जिसका डर था वही हुआ, विरोधी बाज नहीं आये, ऐसी स्थिति में भी नहीं चूके, अब क्या करूँ भँवर को कितना समझाया पर वह नहीं माना। वे इसी उधेड़बुन में थे कि मदनसिंह ने वहाँ आकर कहा, ''थानेदार जी! यह भोज इन्होंने नहीं बल्कि मैंने किया है ले जाना है तो मुझे ले चलो।'' वहाँ खड़े दो सिरदारों ने मदनसिंह की बात का समर्थन किया। वहाँ खड़े अन्य लोग मदनसिंह के इस कदम की तारीफ करने लगे। भाईयों में सच्चा प्रेम है। भँवर ने पुलिस को देखा तो वह पंगत से चलकर वहाँ पहुँचा और बोला, ''देखिये सर! किसी ने गलत रिपोर्ट लिखवायी है, हमारे घर ऐसा कोई आयोजन नहीं हो रहा है, चलकर देख लें।'' ''अच्छा! फिर यहाँ क्या हो रहा है?''

''यहाँ तो हमारे पड़ोसी चाचाजी का परिवार, भुवासा और हम तीर्थ यात्रा करके लौटने पर रात्रि जागरण और गंगाजली का आयोजन कर रहे हैं। यह सामूहिक आयोजन है इसलिये सार्वजनिक स्थान पर हो रहा है। इसके लिये हम सात दिन पूर्व जिलाधीश महोदय से रात्रि-जागरण और 150 लोगों के भोजन की स्वीकृति ले चुके हैं, यह लीजिये अनुमति-पत्र।'' थानेदार ने अनुमति पत्र लिया और क्षमा माँगी। इसके बाद वे भोजन करके ही गये। पासा उलटा पड़ते देख विरोधियों की छाती पर साँप लौट गया। सभी ने भँवर की दूरदर्शिता की प्रशंसा की।

एक महीने बाद वकील साहब गाँव आये और दोनों भाईयों को वसीयत पढ़कर सुनायी। रजिस्टर्ड वसीयत देख दोनों भाई चौंक पड़े। मदनसिंह तो मारे क्रोध के आपा ही खो बैठे, ''भम्मिया! ये सब तेरा किया धरा है, दाता को बरगला दिया तूने, मैं भी देखता हूँ तू मेरा हक कैसे लेगा?'' ''काकोसा! आपको दाता के बारे में ऐसा कहते हुए शर्म आनी चाहिये। मैं दाता के सामने वचनबद्ध हूँ और दाता ने वसीयत मेरी गैर हाजरी में बनवायी थी।'' यह सुन वकील साहब ने भँवर का समर्थन करते हुए कहा, ''भँवर ठीक कह रहे हैं, ठाकुर साहब ने मेरे सिवाय किसी को नहीं पूछा था।'' ''काकोसा! कँवरसा!! दाता ने सौगन्ध न दी होती तो मैं अपना हिस्सा खुशी से छोड़ देता। हाँ अपने भाईयों

को न देने के लिये मैं वचनबद्ध नहीं हूँ समय आने पर उन्हें उचित हिस्सा दे दूँगा।'' उसकी बात सुन वे संतुष्ट हो गये। प्याऊ बन गयी। दोनों भाईयों ने भँवर का हिस्सा छोड़ बँटवारा कर लिया।

समय गुजरने लगा। करणसिंह सेवानिवृत्त होकर गाँव में रहने लगे। भँवर ने बी.ए. कर लिया और छोटे भाई शहर में पढ़ रहे थे। भँवर गाँव में ही रहने लगा। उसकी इच्छा राजनीति में उतरने की थी। भँवर के ससुर विवाह के लिये दबाव डालने लगे लेकिन भँवर ने कँवरसा को कह दिया कि वह अभी विवाह नहीं करेगा क्योंकि पहले वह स्थापित होना चाहता था। करणसिंह ने उसे खेती या व्यापार करने को कहा पर उस पर राजनीति का भूत सवार था।

इस बीच करणसिंह की मृत्यु का वज्रपात भँवर को अन्दर तक हिला गया। उसने किसी तरह स्वयं को संभाला और भाईयों के भविष्य को सँवारने में लग गया। वे अपनी पढ़ाई पूरी मेहनत से कर रहे थे। कुछ समय पश्चात गोपालसिंह ने पुन: विवाह तय करने के लिये कहा पर माँ सा, काकोसा के आग्रह पर भी भँवर इसके लिये तैयार नहीं हुआ। इन्हीं दिनों उसे अपनी राजनीतिक गतिविधियों के कारण तीन-चार महीने घर से बाहर रहना पड़ा। उसके विरोधी लोगों ने अफवाह फैला दी कि भँवर तस्करी करने लगा है।

दुनिया सोती है पर उसकी जीभ जागती है। उड़ते-उड़ते यह खबर राजगढ़ पहुँची। यह जानकर कि भँवर सिंह का जीवन गलत दिशा में चल पड़ा है, गोपालसिंह बेटी के भविष्य के प्रति आशांकित हो गये। उन्होंने अपने स्तर पर सच्चाई जानने का प्रयास भी किया। किसी पर लाँछन लग जाये तो आसानी से नहीं उतरता। चिन्तित पिता ने मदनसिंह को लिख दिया कि वे इस कारण से सम्बन्ध समाप्त कर रहे हैं। परेशान मदनसिंह ने भीखसिंह के माध्यम से बात बनाने की कोशिश की पर गोपालसिंह अपने हठ पर अड़े रहे। कुछ दिन पश्चात उन्होंने रायपुर के शेरसिंह के लड़के से वीणा की सगाई तय कर दी।

भँवर गाँव लौटा तो विरोधी उसे व्यंग्य भरी नजरों से देख रहे थे। घर आते ही माँ सा ने शिकायत भरे स्वर में उलाहना देते हुए कहा, ''भम्मू! हमने तुझे विवाह करने के लिये कितना कहा पर तू नहीं माना, कितनी बदनामी हो रही है तेरे कँवर सा की।'' ''ऐसा मैंने क्या कर दिया माँ सा।'' उसने हैरानी से पूछा तो माँ ने रिश्ता टूटने की बात बताते हुए आगे कहा, ''कबीले वाले तो पहले ही हमसे जलते थे अब तो उनके तानों से कलेजा जलने लगा है।'' सुनकर वह सन्न रह गया। अब दाता को दिये वचन का क्या होगा?

''सब ठीक हो जायेगा माँ सा.....''

''उन्होंने तो दूसरी जगह सगाई भी कर दी, आज तेरे कँवरसा जीवित होते तो.....'' वह रो पड़ी।

भँवर कुछ कहने वाला ही था कि काकोसा आ गये। वे बोले, ''देखा भाभीसा! आपका बेटा कँवरसा का कितना अच्छा नाम कर रहा है अच्छा हुआ वे यह दिन देखने......''

''काकोसा!!!'' भँवर चीख पड़ा। दोनों में तकरार न हो जाये अत: माँ ने बात संभाली।

''बन्ना! भँवर का विवाह उस लड़की से पहले होना चाहिये, आज जल्दी किसी अच्छे घर में रिश्ता करो।''

''भाभीसा! मेरे साले की लड़की है और वे करने को तैयार हैं अगर भम्मू चाहे तो.....''

''यह तो और भी अच्छा है आप जल्दी तय कर......'' भँवर उनकी बात सुनकर बोला-''नहीं माँ सा! अगर आपकी बहू बनेगी तो सिर्फ वही बनेगी नहीं तो.....''बात अधूरी छोड़ वह बाहर निकल गया।

उसने चचेरे भाई भवानी को बुलाकर पूरी घटना की जानकारी ली। उन्होंने सगाई कहाँ की, लड़के और उसके पिता का नाम क्या है? सारी जानकारी पाकर वह परेशान हो गया। दस पन्द्रह दिन वह इसी उधेड़बुन में

रहा कि वह क्या करे? एक दिन उसे खबर मिली कि वे अक्षय तृतीया को वीणा का विवाह करने का निश्चय कर चुके हैं। भँवर के होश-हवाश गुम हो गये। अगर ऐसा हो गया तो वह दाता को दिये वचन को भंग करने का दोषी हो जाएगा। विरोधी हँसेंगे और सगे ताने देंगे। सिर्फ तीन महीने बचे हैं, अक्षय तृतीया को, वह आत्मग्लानि से भर उठा। आह! मेरे कारण खानदान की मर्यादा को स्थायी दाग लग जाएगा। बैठे-बैठे उसकी नजर दाता की तस्वीर पर पड़ी तो उनके शब्द उसके कानों में गूंज उठे, ''बेटे! जिन्दगी में कभी निराश होकर हारना मत, संघर्ष करते रहना क्योंकि साहसी व्यक्ति लक्ष्य प्राप्ति के लिये अन्तिम क्षण तक प्रयास करता है।'' कुछ देर बाद उसकी आँखों में दृढ़निश्चय की चमक उभरने लगी।

अगली सुबह वह कहीं जाने को तैयार था। माँ सा के पूछने पर उसने कहा कि वह शहर जा रहा है। शहर पहुँचते ही उसने रायपुर जाने वाली बस पकड़ी। दिन के दो बजे वह ठाकुर शेरसिंह के सामने बैठा कह रहा था, ''मेरा नाम भँवरसिंह है मैं जीतपुर से आया हूँ, शायद आपने यह नाम सुना हो?''

''कहिये, कैसे आना हुआ?''

''आपके लड़के का रिश्ता राजगढ़ के गोपालसिंह की बेटी से हुआ है।''

''जी हाँ मगर आप.....'' ''क्या लड़की का नाम वीणा कुँवर है?''

''यही नाम है मगर आप क्यों पूछ रहे हैं?'' शेरसिंह की भौंहे तनी।

''देखिये ठाकुर'सा! इस लड़की के साथ पाँच वर्ष पूर्व मेरा रिश्ता तय हो चुका था, वह मेरी माँग है, आप जानते ही हैं कि राजपूतों में कहावत है कि माँग जाये मरे की।'' हैरान शेरसिंह बोले, ''यह क्या बकवास कर रहे हो बना! उन्होंने तो ऐसा कुछ....'' ''....नहीं बताया, यही ना! मेरे दाता व कँवरसा, जिन्होंने यह सम्बन्ध तय किया था वे आज इस संसार में नहीं हैं। ऐसे में पाँच वर्ष तक तय रहने के बाद सम्बन्ध टूटना कितना अपमान-जनक होता है, आप समझ सकते हैं।''

उसकी बात सुन शेरसिंह को क्रोध आ गया, वे परम्परावादी ठाकुर थे, बोले, ''बन्ना! गोपालसिंह ने यह बात मुझसे छुपाई है, अगर आपकी बात सच निकली तो मैं उन्हें धिक्कारूँगा।''

''फैसला आपको करना है ठाकुर'सा! मेरे पास तो मरने या मारने के सिवाय कोई प्रतिष्ठित मार्ग नहीं बचा है। अच्छा, जय माता जी की।''

कुछ दिनों बाद शेरसिंह राजगढ़ पहुँचे। वे सब जान चुके थे इसलिये उन्होंने गोपालसिंह को खूब खरी-खोटी सुनाई। गोपालसिंह ने तस्करी वाली बात कहकर सफाई पेश करनी चाही पर उन्होंने एक नहीं सुनी और सम्बन्ध समाप्ति की घोषणा करके चले गये। यह कैसे हुआ? यही प्रश्न उनकी बेचैनी का कारण बन गया। अगले ही दिन भँवर के पत्र के साथ रहस्य खुल गया। उसने अपनी कारस्तानी बताते हुए यह भी लिखा कि आगे ऐसा प्रयास मत करना और विवाह तय करना हो तो जीतपुर पधार जाएँ। गोपालसिंह क्रोध से काँप उठे, ''तू कितना भी कर ले लफँगे मैं तुझे कभी जंवाई नहीं बनाऊँगा।'' इसके बाद भी उन्होंने एक-दो जगह रिश्ता करने का प्रयास किया पर बात नहीं बनी। उनकी पत्नी ने समझाया कि जैसे बाई के भाग्य में लिखा है वही होगा। आप जीतपुर में ही विवाह कर दो। पर वे नहीं माने। अपने पिता को परेशान देख वीणा ने कह दिया कि आप क्यों परेशान होते हो, मेरा विवाह होगा तो जीतपुर वरना मैं कुँवारी रह जाऊँगी। उसने तय कर लिया और जिद्द कर बैठी। आखिर राजपूत बाला ठहरी।

सभी का हठ अपनी जगह कायम था और समय को तो चलते जाना है। एक साल निकल गया। भँवर पर भी घर वालों ने कहीं और विवाह करने का दबाव डाला पर वह कहाँ मानने वाला था। गाँव में तरह-तरह की

अफवाहें उड़ने लगी जिससे माँ सा परेशान सी रहने लगी। गोपालसिंह वीणा के हठ को देख शेरसिंह के पास पहुँचे और क्षमा याचना करते हुए छोटी बेटी का रिश्ता स्वीकार करने का आग्रह किया। सारी परिस्थिति को जान वे गोपालसिंह के प्रति सहानुभूति से भर गये लिहाजा उन्होंने रिश्ता स्वीकार कर लिया। एक माह बाद गोपालसिंह की छोटी बेटी का विवाह सम्पन्न हो गया।

जीतपुर समाचार पहुँचा कि वीणा कुँवर का विवाह हो गया। विरोधी खुश हो गये। माँ सा और काकोसा ने तय कर लिया कि अब वे भँवर की एक न सुनेंगे। उनकी बात सुन भँवर ने कहा, ''माँ सा! दाता की इच्छा पूरी नहीं होगी तो मैं कुंवारा ही रहूँगा।'' अब भला जिद्दी को कौन समझाये?

भँवर का परिवार तो लोगों के ताने सह सकता था पर गोपालसिंह आखिर लड़की के पिता थे, कब तक सहते। सच ही कहा है, 'बेटी जायी रे जगन्नाथ जियाँरा हेठे आया हाथ।' परिवार वालों की जिद्द और दुनिया के तानों के आगे उन्हें झुकना पड़ा, किन्तु पाठकों वह एक राजपूत थे! उन्होंने अपने आत्मसम्मान की रक्षा करने के लिये भाईयों को कहा, ''केवल इस शर्त पर वीणा का विवाह जीतपुर करूँगा कि एक तो मैं कभी जीतपुर नहीं जाऊँगा दूसरा मैं चँवरी में बैठकर कन्यादान नहीं करूँगा, यह काम बड़े भाई साहब ही करेंगे।'' इस पर परिवार को क्या आपत्ति हो सकती थी। शुक्र था वे माने तो सही।

गोपालसिंह के भाई जीतपुर पहुँचे। जब उन्होंने अपने आने का प्रयोजन बताया तो मदनसिंह आश्चर्य से उछल पड़े। ''अरे! सगाजी कहीं आप मजाक तो नहीं....''

''कैसी बात कर रहे हैं सगाजी! 'फूलरिया दूज' का मुहूर्त निकला है, तैयारी शुरू कर दीजिये।'' भँवर का परिवार खुशी से झूम उठा। गम की कई काली घटाओं के पश्चात परिवार में खुशी का सूरज निकला था। विरोधियों ने सुना तो उनकी छाती पर साँप लौट गया। इधर भँवर बिल्कुल सामान्य था परिवारजनों के समक्ष मुस्कराते हुए कह रहा था, ''इसमें आश्चर्य कैसा? ऐसा दाता ने कहा था।''

(यह एक सत्य घटना का वर्णन है, इसमें पात्रों के नाम व गाँव आदि के नाम परिवर्तित किए गये हैं। मृत्युभोज शास्त्रानुकूल हो, किन्तु विशाल पैमाने पर मनमाने रूप में किए जाने वाले मृत्युभोज के हम पक्षधर नहीं हैं, यहाँ उपरोक्त कहानी की सच्चाई बनाए रखने के लिये बात को यथारूप में रखा गया है। – **सम्पादक**)

पृष्ठ 18 का शेष

लक्ष्मी, कर्म, धर्म और सच

के पैर मजबूती से पकड़ लिये। सेठ बोला लक्ष्मी, कर्म और धर्म चले गये परन्तु तुम्हें नहीं जाने दूंगा। सच ने जाने का प्रयास किया परन्तु सेठ ने सच को नहीं जाने दिया। अन्त में सच ने कहा ''मैं यही रहूँगा।''

सेठ निश्चिन्त हो गया। परन्तु कुछ समय बाद ही सेठ को धर्म दिखाई दिया। सेठ ने धर्म से प्रश्न किया–''आप वापस कैसे पधारे?'' धर्म ने उत्तर दिया–''सच मेरा परम मित्र है जहाँ सच रहता है, वहीं पर मेरा वास होता है अत: सेठ मैं तुम्हारे पास ही रहूँगा।''

कुछ समय बाद सेठ को कर्म भी दिखाई दिया। सेठ ने कर्म से भी वापस आने का कारण पूछा। कर्म ने उत्तर दिया–''जहाँ सच, धर्म रहते हैं वहीं पर मेरा वास होता है। अत: सेठ मैं भी तेरे पास ही रहूँगा।''

कुछ समय बाद लक्ष्मी प्रगट हुई। लक्ष्मी से भी सेठ ने वापस आने का कारण पूछा। लक्ष्मी ने उत्तर दिया–''जहाँ सच है, धर्म है, कर्म है वहीं पर मेरा वास है।''

अत: सच को कभी भी मत छोड़ो। सदा सत्य वचन बोलो।

राव देपालदे

– शैतानसिंह मेड़ी का मगरा

देपालदे (देवपालदे) का वृत्तान्त सैंकड़ों वर्ष पुराना है। सिंध के उत्तरी शिरे पर बसा शहर देपालदेपुर उनकी कीर्ति का साक्षी है। यदुवंशी जब थार के रेगिस्तान में आये तब केहर प्रथम के पुत्र राव तणु ने अपने नाम से तणुकोट नामक नगर बसाया और अपनी राजधानी स्थापित की। तणुकोट वर्तमान में 'तन्नौट' नाम से पुकारा जाता है। राव तणु और उनकी रानी सारंगदे सोलंकियणी जी मातेश्वरी आईनाथ जी के परम भक्त थे और उन्होंने आईनाथजी के दर्शन करने का मन बनाया। तब तन्नोट से प्रस्थान कर वर्तमान भादरिया राय मंदिर ग्राम भादरिया (जैसलमेर) में श्री आईदाथजी के दर्शन किये और मातेश्वरी आईनाथ जी को तणुकोट (तन्नौट) आने का निमंत्रण दिया।

कुछ समय पश्चात श्री आईनाथ जी तन्नौट पधारे। राव तणु ने भी आईनाथ जी से अपने पुत्रों विजयराज और जयतुंग (जैतुंग) के लिये आशीष और वरदान माँगा तो श्री आईनाथ जी ने प्रसन्न होकर युवराज विजयराज को अपने हाथ की चूड़ निकालकर दी। विजयराज आगे चलकर 'विजयराज-चुड़ाला' के नाम से ख्याति प्राप्त योद्धा हुए जिन्होंने देवी द्वारा दी गई चूड़ पहनकर अनेक युद्धों में अपने दुश्मनों पर जीत प्राप्त की।

मातेश्वरी ने राव तणु के दूसरे पुत्र जयतुंग (जैतुंग) को यह वरदान दिया कि जब तक राव पुत्र हल पर हाथ नहीं रखेगा तब तक तुम्हारा और तुम्हारे वंशजों का शासन (राज) कायम रहेगा। तन्नौट की गद्दी पर राव तणु के बाद युवराज विजयराज बैठे। जयतुंग ने वहाँ से प्रस्थान करके बिकमपुर नगर को आबाद किया। बिकमपुर उस समय वीरान था। बिकमपुर पर वर्षों बाद जैतुंगों (जयतुंग जी के वंशज जैतुंग भाटी) का शासन रहा। इसी वंश परम्परा में राव कोल्हा (कोला) हुए जिन्होंने मलेच्छों से गायों की रक्षा करते हुए अपने प्राणों की बाजी लगाई। मलेच्छों से युद्ध करते समय उनका सिर बिकमपुर में कटा और उनका धड़ लड़ता हुआ बारह कोस (36 कि.मी.) दूर गिराजसर नामक स्थान पर गिरा। बिकमपुर क्षेत्र में जहाँ वे जूझार हुए (उनका सिर कटा) वहाँ और जहाँ उनका धड़ गिरा वहाँ देवले बने हुए हैं। इतनी दूर तक, सिर कटने के बाद धड़ के लड़ते रहने के उदाहरण बहुत कम हैं। पनराजजी, मुखड़ो जी गोहिल, राव खेमाल बरसलपुर आदि भी सिर कटने के बाद भी बहुत दूर तक शत्रुओं को मारते-काटते रहे थे। ऐसे उदाहरण केवल राजपूत इतिहास काल में ही मिलते हैं।

इसी वंश परम्परा (जैतुंग भाटी वंश) में आगे चलकर देपालदे हुए- **ज्यांरे बिज्योड़ा मोती नीपज्या।** एक बार की बात है कि राव देपवालदे बिकमपुर से बाप परगने जा रहे थे। बाप से 6 मील पहले एक गाँव लूम्भानिया पड़ता था, जो बिकमपुर के रावों द्वारा चारणों को दिया गया था। इसी गाँव से देपालदे गुजर रहे थे। वहाँ एक किसान श्रावण मास में खेत जोत रहा था। उसके खेत जोतने का दृश्य अनोखा था। एक तरफ बैल जुता हुआ था तो उसके बराबर दूरी तरफ एक स्त्री हल खेंचने में जुति हुई थी। इस दृश्य को देखकर देपालदे विचलित हो गए और स्त्री पर उन्हें दया आ गई। उस स्त्री को कुछ आराम दिलाने के उद्देश्य से देपालदे ने उस किसान से पूछा- स्त्री को क्यों जोत रखा है? किसान ने उत्तर दिया कि स्त्री मेरी है, मेरी जो मरजी मैं कुछ भी करवा सकता हूँ। किसान उत्तर देकर वापस अपने काम में लग गया। देवपालदे ने अपने

सेवकों से दूसरा बैल लाने को कहा क्योंकि किसान के पास दूसरा बैल नहीं था, इसीलिए उसने बैल की जगह स्त्री को जोत रखा था। बैल लाने का आदेश देने के बाद भी किसान अपनी स्त्री से हल खिंचवाता रहा, वह रुका नहीं। तब देवपालदे ने किसान से कहा-अब तो रुक जाओ। तब किसान ने उत्तर दिया कि जमीन सूख रही है, कैसे रुक जाऊँ। तब देवपालदे ने किसान से कहा कि स्त्री को बैठ जाने दे, तू उसकी जगह हल खींच और मैं हल पकड़ कर बीज डालता रहूँगा। कुछ समय बाद एक सैनिक बैल लेकर आ गया। किसान को बैल दे दिया। किसान ने बैल जोत कर खेत बीजा। किसान तब तक जान चुका था कि उसे बैल दिलवाने वाला और उसके साथ लगकर खेत जोतने वाला उस क्षेत्र का राजा ही था।

समय आया किसान की फसल बहुत अच्छी हुई। खेत बालियों (सिटों) से लद गया लेकिन जहाँ देपालदे ने हल जोता था वहाँ विचित्र प्रकार की बालियाँ थी। उनमें दाने नहीं थे। किसान को रोष आ गया। किसान बड़बड़ाने लगा-कैसा कर्महीन राजा था, जहाँ उसने हल-चलाया, वहाँ बालियों में दाना तक नहीं। किसान ने सभी बालियाँ (सिटे) काटी। उसके पश्चात पशुओं के चारे के लिये डोके (डंठल) काटे। सभी डोके काटने के पश्चात अन्त में देपालदे द्वारा जोति गई फसल के डोके काटने लगा तो उन डोकों से मोती झरे। किसान बहुत खुश हुआ और सभी डोकों से मोती निकालकर एक पोटली बाँधकर देपालदे के दरबार में पहुँचा। उसने पोटली खोल दी। दरबारी कुछ समझ पाते उससे पहले किसान जो एक चारण था, बोला-

जे जाणूं जिण बार, निज भल मोती नीपजै।
तो बावत वारों ही वार, नहीं तो दिन सारै देपालदे।।

अर्थात- हे देव तुल्य देपालदे यदि मुझे यह पहले पता होता कि आपके हल चलाने से मोतियों की फसल निपजेगी तो मैं आपसे वार से वार यानी सात दिन तक हल चलवाता, यदि आप सात दिन तक नहीं चलाते तो कम से कम शाम तक तो चलवाता।

यह दोहा आज भी जैतुंग भाटियों के बिड़द बखान में उनके बही-भाट, उनके पोल-पात और उनके ढोली (ढाढी) आज भी गुणगान करते हैं, उनकी दयालुता का बखान करते हैं। देपालदे जी ने जहाँ हल चलाया था, वह खेत 'मोतीसरा' नाम से जाना जाता है। यह खेत आज भी उन चारणों के वंशजों के पाास है।

जैतंगुंजी के वंशज वर्तमान में कोलासर पश्चिम (कोल्हासर), गिराजसर, सेवड़ा, मेड़ी का मगरा, हदां, कल्याणसर, शोभासर, जैतुंगों का बेरा, जैतुंगों की ढाणी (बीकानेर), नया गाँव, मोरीया, मनजितिया (जोधपुर), कवास (बाड़मेर), ठाकुरों की ढाणी (गंगानगर), अमरपुरा (पंजाब), आडसर (चूरू) इत्यादि गाँवों में निवास करते हैं। बिकमपुर पहले स्वतंत्र रियासत, फिर पूगल और बाद में जैसलमेर रियासत में मिल गई थी। वर्तमान में बिकमपुर बीकानेर जिले में स्थित है।

पद का महत्त्व कार्य से है औरे कोई भी कार्य हीन नहीं है। यदि मानव अपने पदों के मुखौटे लगाकर एक दूसरे के बीच खाइयाँ खोद डाले तो क्या मानवता टुकड़े-टुकड़े नहीं हो जाएगी? मानव एक है, उसकी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार उसके पद हैं और उन पदों के अनुसार उनके कार्य हैं। पर मानवता को नहीं बाँधते, मानवता पदों को बाँधती है।

- डॉ. राम कुमार वर्मा

गतांक से आगे

आदर्श और अनूठे गाँव

– कर्नल हिम्मत सिंह

अध्याय–1
(हमारे अतीत के गाँव)

स्वर्ग किसी आसमान की छत पर नहीं होता है। जहाँ पूर्ण विश्राम और आन्द की अनुभूति होती है वहीं स्वर्ग है। कश्मीर अपने प्राकृतिक सौंदर्य के कारण पृथ्वी का स्वर्ग माना जाता है तो दूर देहात का नाम लेते ही जहन में जो गाँव की तस्वीर उभरती है उसकी पहचान मात्र से ही सुकून की जो अनुभूति होती है वह किसी अभिहित स्वर्ग से कम नहीं है।

दूर-दूर तक लहलहाते हरे-भरे खेत, हवा के झोंकों से शाखाओं पर झूमते सरसों के पीले-पीले फूल, पनघट पर पानी भरती गाँव की गोरियाँ, लोक गीतों पर थिरकती अल्हड़ नव युवतियाँ मानो गाँव की समूची संस्कृति को समेटे हुए है।

प्राचीन समृद्ध लोक संस्कृति की परम्परा का जो चलन था, लोक कथाएँ जहाँ फलती-फूलती थी। गौरवशाली और शौर्यपूर्ण लेकिन सादा और सहज जीवन जीने वाले, जीवन मूल्यों की कद्र करने वाले लोग जो भाईचारे की भावना से ओतप्रोत थे। तीज त्योहारों पर उनकी हर्षित मुद्रा, उमंग और अद्‌भुत रौनक देखते ही बनती थी।

खेती गाँव का मुख्य आधार और किसान गाँव की शान हुआ करते थे। गाँव की हाट, जहाँ पूरे गाँव को मस्ती लूटते देखा जा सकता था। लोकगीत और लोक नाटक, लोक कथाएँ ग्रामीण आंचलों में मनोरंजन के साथ ही नैतिक शिक्षा का भी सशक्त माध्यम होते थे। गाँव में समृद्धि थी भाषा की, बोली की और रीति-रिवाजों की। गाँव भारत की विविधता का आईना हुआ करते थे।

अतीत के गाँव सामुदायिकता की नींव पर स्थित थे। गाँव अपने स्वभाव से ही सामुदायिक होते थे क्योंकि वहाँ प्रत्येक व्यक्ति के पास इतने संसाधन नहीं होते थे कि स्वयं ही सभी आवश्यकताओं की पूर्ति कर ले, इसलिए परस्पर सहयोग के माध्यम से ग्रामीण जीवन शैली संचालित होती थी।

गाँव की मूल प्रकृति थी ''पंच परमेश्वर की आत्मा'' जो गाँवों में निवास करती थी। गाँव एक जीवन दर्शन हुआ करता था। पनघट पर महिलाएँ, खेत खलिहानों से बैल सहित गाय, भैंस सहित मिमयाती बकरी से लेकर शिकारी कुत्तों की चौकीदारी तक ही गाँव सीमित नहीं था। गाँव के पोखर हो या कुएँ-बावड़ी, पनघट तक आती महिलाओं का झुण्ड, उनकी पायलों की संगीतमयी लयबद्ध चाल, कानों में मधुर संगीत का संचार करती थी। पनघट पर ही गाँव की सभी खबरों का आदान-प्रदान हो जाया करता था।

बैलों के गले में बंधी घंटियाँ, नये उभरते सींगों को टकराते बछड़ों की जोर आजमाइश के कौतूहल भरे दृश्य, पोखर में एक घाट पर पशुओं का स्नान और दूसरे घाट पर ग्रामीणों द्वारा किये जाने वाले स्नान का दृश्य अद्‌भुत था।

सुबह सवेरे प्रभात फेरी में सीताराम-सीताराम, राधे-राधे जैसी कर्णप्रिय राम धुनें जो नई ऊर्जा और स्फूर्ति का संचार कर रोजमर्रा की जिन्दगी का आगाज करने का आह्वान करती थी। घर के वृद्ध जिन्हें अरुणोदय के बाद चाय पानी की इच्छा होती तो वे सिर्फ भगवान का नाम ले लेते थे। घर की बहू-बेटियाँ स्वत: यह बात समझ जाती थी कि ससुरजी को चाय चाहिए। बुजुर्ग घर में घड़ी के अलार्म की तरह समय का अहसास करा देते थे। बुजुर्गों से अनेक अनुभव की बातें सीखने को

मिलती थी। बुजुर्ग की सेवा कौन कर रहा है यह विषय गाँव में चर्चा बन जाया करता था।

प्रात:कालीन और गोधूलि बेला में घर के सामने अलाव लोगों के एकत्रीकरण का सहज ही कारण हुआ करता था। किसी को कोई निमंत्रण नहीं पर अलाव रात को लगे या प्रात: ठण्ड के मौसम में, ग्रामीणों का आना सुनिश्चित ही था। उस दौरान गाँव में घटित होने वाली घटनाएँ चर्चा का विषय हुआ करती थी। बिना किसी रेडियो, अखबार और दूरदर्शन के गाँव की खबरों की जानकारी वहाँ मिल जाया करती थी।

गाँवों में सूर्योदय से पूर्व और शाम को गोधूलि बेला तक की दिनचर्या मनमोहक और महत्त्वपूर्ण हुआ करती थी।

लोहार, कुम्हार और सुनारों के मोहल्लों की चमक देखते ही बनती थी। एक नाई का परिवार ही पूरे गाँव को बाँधकर रखता था। हर शुभकार्य का साक्षी गाँव का नाई हुआ करता था।

एक घर का दुख देखते ही देखते धीरे-धीरे गाँव का दुख हो जाता था। सुख-दुख को साझा करने की प्रथा का चलन था। एक दूसरे से कुशलक्षेम पूछना और सुख-दु:ख में शामिल होने का रिवाज था। ब्याह में दावत के समय व्यक्तिगत अनुरोध ''अरे भैया हमारे हाथ से तो लड्डू लिया ही नहीं'' आम होता था।

संयुक्त परिवार का चलन था, जिसके सदस्य परस्पर सहयोग से जीवन व्यतीत करते थे। काका-काकी, ताई-ताऊ, भाई-भाभी सभी एक ही आँगन में रहते थे। एक ही जगह बड़े-बड़े बर्तनों में एक साथ सभी का भोजन पकता था। अपने-अपने नियत समय पर आकर परिवार के लोग भोजन पा लेते थे।

गाँव में ही मुण्डन संस्कार, उपनयन संस्कार, विवाह का आयोजन निजी होते हुए भी पूरा समाज खड़ा हो जाता था। बारात की अगवानी गाँव किया करता था और बेटी की विदाई करते समय गाँव की बेटियाँ और महिलाएँ अपना कर्तव्य निर्वाह करने के लिये बेटी को विदा करती थी। हर घर से एक घूंट पानी तो विरह के आँसू बहती उस बिटिया को चुप करने के लिये सभी पिलाते थे। गाँव से बेटी एक घर से जाती थी, पर रोता समूचा गाँव था। गाँव में किसी का निधन हो जाता तो पूरे गाँव में जब तक उसकी अर्थी नहीं उठ जाती तब तक चूल्हे नहीं जलते थे। ये परम्पराएँ थीं जो प्राय: गाँवों में देखने को मिलती थी।

ढोल बजाने वाले, शहनाई और नगाड़े बजाने वाले खुशी-खुशी आते थे कि आज जजमान के घर उत्सव का कार्यक्रम है। घर में इनके साथ घरेलू संबंध स्थापित हो जाया करते थे। प्रात: से लेकर रात्रि को सोने से पहले तक घर के सेवक सपरिवार अपने घर की तरह काम में लगे रहते थे। बात एक तरफा नहीं हुआ करती थी। सेवक जिसे मालिक मानता था, वह मालिक भी सेवक के घर पहुँच जाता था और वहाँ पहुँचकर उनके दुख-दर्द को साझा करता था। स्थिति ऐसी होती थी कि सेवक की बेटी उसके घर में बड़ी होती थी और चिंता मालिक को होने लगती थी। मालिक सहज सेवक से कहा करते थे कि अब एक लड़का भी ढूंढना पड़ेगा। इतनी सी बात से परिवार का संबंध स्वयं उजागर हो जाता था। सेवक की बेटी का बाली उम्र और मालिक के ललाट पर सिलवटें आना, ये दायित्व का बोध ही माना जाता था। गाँव में परिवार के सदस्य की तरह सेवक को रखते थे। सेवा करने वाले को नौकर नहीं सहायक माना जाता था और वह परिवार का ही अंग हुआ करता था।

हर गाँव में चौपालों की प्रथा थी जिनको गाँव की पार्लियामेण्ट माना जाता था। यहाँ पर पूरे गाँव के उम्र दराज व्यक्ति बैठा करते थे। गाँव और घर की खबरें स्वत: वहाँ आ जाया करती थी। चौपाल की अपनी

हैसियत हुआ करती थी। चौपाल पर जो भी मसला पहुँचता उस पर गहन चर्चा होती थी। अन्त में यदि कोई अन्तिम फैसला होता था तो वह चाहे उस बुजुर्ग का हो, उस चौपाल की शोभा हुआ करता था। उसके फैसले को बदलने की हिम्मत सामान्य लोगों में नहीं हुआ करती थी। गाँव की अपनी ज्येष्ठता भी हुआ करती थी और उसका सभी सम्मान करते थे।

चौपालों पर रेडियो और अखबारों में प्रकाशित खबरों के साथ-साथ आस-पास की राजनीति की भी चर्चाएँ हुआ करती थी। चौपाल पर कभी-कभी चुने हुए प्रतिनिधि भी आते थे और उन्हें पंचायत की व्यथा कथा से अवगत कराया जाता था।

गाँव में कभी भी पुलिस नहीं आती थी। गम्भीर से गम्भीर मसलों पर चर्चा के बाद रास्ता स्वयं निकल आता था। गाँव में पुलिस के आने को गाँव की बेइज्जती करार दिया जाता था।

गाँव का मुखिया कोई भी हो पर वह चौपाल से बाहर नहीं जा सकता था। चौपाल की गरिमा को बनाये रखना हर ग्रामवासी का फर्ज था। चौपाल पर गाँव की हर बात का लेखा-जोखा रखा जाता था। बात छोटी हो या बड़ी, चर्चाओं से परिणाम और समाधान निकलता था।

बड़े ही सुन्दर थे हमारे अतीत के गाँव और बहुत ही शालीन थे हमारे ग्रामवासी जो ईश्वर को सदैव सिर पर रखते थे। न्यायप्रिय, सत्यनिष्ठ और ईश्वर की सत्ता के प्रति अटूट श्रद्धावान थे वे लोग, पता नहीं कब और किस कलमुंहे की नजर लगी। पाश्चात्य सभ्यता के दुष्प्रभाव ने हमारे ग्रामीण जीवन पर ऐसा तीखा प्रहार किया कि हमारे जीवन मूल्य बदल गये, हमारी सोच बदल गई ''हम और हमारी'' ''मैं और मेरा'' में परिवर्तित हो गया। लोग स्वार्थ में अँधे हो गये। गाँव, जिन पर हम गर्व करते थे उन्हीं से हमारा मोह भंग हो गया। बंधे हैं तो केवल स्वार्थ की डोरी से, न तो आत्मीयता शेष रही और न ही स्वामित्व का भाव।

अध्याय-2

(आधुनिक गाँव)

हमारे देश में जो परिवर्तन विगत कई सौ वर्षों में हुए हैं उनसे कहीं अधिक परिवर्तन पिछले कुछ दशकों में ही हो गये हैं। आगे इनमें और तेजी आएगी। ऐसे ही हमारे गाँव देहातों में भी परिवर्तन आए हैं और आते जा रहे हैं।

यह आवश्यक नहीं है कि आधुनिकता के नाम पर होने वाला हर परिवर्तन अच्छा ही हो। कई बार परम्परा से चली आ रही चीजें नए बदलावों से कहीं अधिक बेहतर होती हैं। दरअसल किसी भी परिवर्तन की प्रासंगिकता इस बात पर निर्भर करती है कि वह बदलाव अपने मूल से कितना सुसंगत है। यदि परिवर्तन ऐसे हों कि वे संपूर्ण ढाँचे के लिये ही खतरा पैदा करने लग जाएँ तो आवश्यक है कि परिवर्तनकारी तत्वों को नियंत्रित किया जाए या फिर उन्हें ढाँचे के अनुकूल बनाया जाए।

आधुनिकता के साये में हो रहे परिवर्तनों ने गाँव के मायने बदल दिए। गाँव अब गाँव नहीं रहे। परिस्थितियाँ बदल गई, गाँव खाली हो गए। कुछ घरों में बच्चे और गाँव में अबला, असहाय वृद्धों को छोड़ नौजवानों की टोलियाँ तो खो सी गई हैं, गाँव में युवाओं के दर्शन दुर्लभ हैं। पलायन की गम्भीर स्थिति का जायजा लेने के लिये उत्तरांचल का उदाहरण लेते हैं जहाँ सात सौ से अधिक गाँव भूत हो गये हैं, पौने तीन लाख घरों पर ताले लटक रहे हैं। राज्य की 52% आबादी चार मैदानी जिलों में और शेष 48% आबादी नौ जिलों में निवास करती है। आँखों ने जो गाँव देखे थे अब वैसे गाँवों का मिलना कठिन हो गया है। अभी गाँव तो हैं परन्तु गाँव की आत्मा को लोगों ने मार दिया है।

शहरों की चकाचौंध की चपेट में गाँव आ गए। लोगों के मन में यह बात घर करती जा रही है कि ग्रामीण अपने को दोयम दर्जे का नागरिक समझने लगे हैं। समाज में

उनका स्थान शहरियों जैसा नहीं है। शहर यानी उन्नत और प्रगतिशील लोग, गाँव यानी गंवार लोग।

पिछले कुछ वर्षों से शहरों ने गाँव पर अतिक्रमण करना शुरू कर दिया। गाँवों को शहर बनाने का चलन कुछ शहरवासियों ने प्रारम्भ किया जो घातक कैंसर की तरह गाँवों से चिपकता गया। गाँव अपने मूलस्वरूप को भूलता जा रहा है। गाँव की मूल प्रकृति थी ''पंच परमेश्वर की आत्मा'' जो गाँवों में बसा करती थी, धीरे-धीरे वह भावना लुप्त होती चली जा रही है।

भारतीय गाँवों की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण किया जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि उदारीकरण के बाद भारतीय समाज में जो बदलाव आया उसने ग्रामीण संरचना को बुरी तरह से प्रभावित किया है। दरअसल नब्बे के दशक में न केवल आर्थिक उदारीकरण हुआ बल्कि जीवनशैली में भी पश्चिम के उदारवाद का प्रभाव दिखने लगा जिसके मूल में व्यक्तिवाद था। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय गाँव जो सामुदायिकता की नींव पर स्थित थे उनमें व्यक्तिवाद की ईंट जुड़ने लगी। जाहिर है कि जब नींव और ऊपरी भवन में साम्य नहीं होगा तो ढाँचा बिगड़ेगा ही।

उदारीकरण के बाद जीवन जीने के मानकों में परिवर्तन आया और बाजारवादी मूल्यों के प्रवेश ने सामुदायिकता के भाव को कमजोर कर लाभ हानि को प्रमुख बना दिया। गाँव के परिवार भी अब संकुचित होने लगे और परिवार पड़ोसियों में तब्दील होता गया। गाँव का खुला आँगन शहरों की भाँति चारदीवारी में घिरने लगा और रिश्ते भी उसी बीच चक्कर काटने लगे। एकल परिवार शहरी जीवन की जरूरत हो सकते हैं और किन्हीं कारणों से ग्रामीण जीवन की भी, किन्तु संयुक्त परिवार के मूल्य का टूट जाना एक अभिशाप से कम नहीं माना जा सकता है। फिर परिवार को अगर बड़े संदर्भ में लें तो यह उन सभी सामाजिक संस्थाओं से जुड़ता है जिसके सदस्य परस्पर सहयोग से जीते हैं।

इस परिवर्तन का प्रभाव अन्य क्षेत्रों पर भी पड़ा। दरअसल पश्चिमी जीवन शैली को ही मानक नाम लेने और उसके अनुसार ही अपने जीवन को ढालने की कोशिश ने समृद्ध विविधता को समाप्त कर कृत्रिम एकरूपता को थोपने का काम किया। लोकगीतों का चलन कम हो जाना, फाग और चैती जेसे ऋतु आधारित गीतों का लुप्त हो जाना। और सबसे बढ़कर ऐसी परम्परा को मानने की वकालत करने वालों को पिछड़ा मानने की मानसिकता भी इन्हीं ''मानकीकरण'' के कारण जन्म लेती है। भोजपुरी गीतों में बढ़ती अश्लीलता भी इसी का एक उदाहरण है। वस्तुतः पश्चिमी यौन उन्मुक्तता का प्रवेश जिस रूप में इन गीतों में हुआ है वह भौंडेपन में तब्दील हो गया क्योंकि यह बदलाव आंतरिक न होकर बाह्य रूप से आरोपित था। ऐसा नहीं है कि परम्परागत ग्रामीण संरचना पूर्णरूप से निर्दोष है किन्तु वह प्रकृति के अधिक निकट है। वहाँ बनावटीपन का भाव कम है। कोई भी बदलाव आंतरिक रूप से होता है तो अधिक स्थायी होता है ऊपर से थोपा गया परिवर्तन क्षणभंगुर होता है।

गाँव भारतीय अर्थव्यवस्था और सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों के केन्द्र रहे हैं। लेकिन कितने अफसोस की बात है कि ग्रामीण लोग अपनी गौरवशाली संस्कृति को दरकिनार कर शहर की पाश्चात्य संस्कृति के गर्त में समा जाना चाहते हैं। ये लोग रोजी-रोटी की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं और अपने साथ लेकर आते हैं नशे की आदत, जुआखोरी और ऐसी ही कई अन्य बुराइयाँ जो ग्रामीण जीवन को दूषित करने पर आमदा हैं। नतीजा सबके सामने है। गाँवों में भाईचारे की भावना समाप्त होती जा रही है और ग्रामीण गुटबाजी का शिकार हो रहे हैं। लोग गाँवों से निकलकर शहरों की तरफ भागने लगे हैं क्योंकि उनका गाँवों से मोह भंग हो रहा है।

शहरों की बुराइयों को देखते हुए यह चिंता जायज है कि गाँव की सहजता अब धीरे-धीरे मर रही है। तीज त्योहारों पर भी गाँवों में पहले वाली रोनक नहीं रही है। शहरवासियों की तरह ग्रामीण भी अब रस्म अदायगी ही करने लगे हैं। शहर और गाँवों के बीच पुल बने मीडिया ने शहर की अच्छाइयाँ गाँवों तक भले ही न पहुँचाई हो, पर वहाँ की बुराइयाँ गाँव तक जरूर पहुँचा दी है। अंधाधुंध शहरीकरण के खतरे आज हर तरफ साफ दिखाई दे रहे हैं। समाज का तेजी से विखंडन हो रहा है। समाज परिवार की लघुत्तम इकाई तक पहुँच गया है। लोग समाज के बारे में न सोचकर सिर्फ अपने और अपने परिवार के बारे में सोचते हैं।

जब तक विकास की हमारी अवधारणा आयातीत होती रहेगी और उदारीकरण के प्रति हमारा नजरिया नहीं बदलेगा तब तक यथास्थिति बनी रहने की संभावनाएँ अधिक हैं।

पाश्चात्य संस्कृति और सूचना क्रान्ति के अलावा हमारी सामुदायिक सहजता और आत्मीयता को सरपंच (ग्राम प्रधान) के चुनावों ने सबसे अधिक आघात पहुँचाया है। यह पंचायतीराज की आलोचना नहीं जमीनी सच्चाई है। पंचायत ही ऐसी सबसे बड़ी प्राणवान प्रभावी संस्था है, जो गाँव की जीवन पद्धति को गहराई से प्रभावित करती आ रही है। पंचायत के चुनावों में गाँव-देहात जाति में और ऊँचे-नीचे वर्गों में बँट जाते हैं। जो गाँव जाति और वर्ग में विभक्त होकर भी अपने-अपने दायरे में कर्मरत रहते हुए परस्पर सौहार्द से रहते आ रहे थे वे अब चुनावी प्रतिस्पर्द्धा में जाति और धर्म में बँटकर स्थायी रूप से विरोधी हो गये हैं। इससे परस्पर सहयोग और सम्मान के भाव क्षतिग्रस्त हुए हैं। गाँव जो शान्त थे अब जातीय हिंसा, विरोध और वैमनस्य से सुलग रहे हैं। पंचायत चुनाव के कारण गाँवों का मूल चरित्र बरबादी के कगार पर ही आ खड़ा हुआ है। इसमें दोष पंचायती राज की संकल्पना का नहीं बल्कि उसको व्यवहार में लाने की प्रक्रिया का है।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जब गुजरात के मुख्यमंत्री थे तब उन्होंने गाँवों में पंचायतों के चुनावों में निर्विरोध चुनाव पर बहुत अधिक जोर दिया था। जिसके कारण गुजरात में अनेक पंचायतें निर्विरोध चुनी गई। मध्यप्रदेश की बधुवार पंचायत में कभी ग्राम प्रधान का चुनाव हुआ ही नहीं। वहाँ की परम्परा निर्विरोध ग्राम प्रधान चुनने की रही है और सभी निर्णयों में सर्वसम्मति ही झलकती है।

गाँवों में आर्थिक समृद्धि, आत्मनिर्भरता और जनभागीदारी अवश्य बढ़नी चाहिए। कृषि मजदूरों और युवाओं के रोजगार की व्यवस्था आवश्यक है पर इसे स्वदेशी मॉडल के माध्यम से ही किया जाना चाहिए। गाँव देहात में अभी भी सद्भाव बना हुआ है, क्योंकि ये अभी भी भारतीय अर्थव्यवस्था, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश के केन्द्र में बने हुए हैं।

रात है तो प्रभात अवश्य आएगी इसलिए विश्वास करना चाहिए कि पाश्चात्य संस्कृति के मोहजाल से निकलकर अपनी संस्कृति की तरफ लोग अवश्य लौटेंगे। ईश्वर करे उस सुनहरी प्रभात का आगाज शीघ्र हो।

(क्रमशः)

मानवीय जीवन पारस्परिक आदान-प्रदान के सिद्धान्त पर टिका हुआ है और जो लोग यह सोचते हैं कि अपने चारों तरफ की दुनिया को शिकार बनाना है, वे अनायास ही विनाश की भूमि में अपने को फँसा लेते हैं और इस प्रकार समर्द्धि के मार्ग से दूर हटते जाते हैं।

– जेम्स ऐलन

गुणकारी नीम

धरातल के सौंदर्य को संवारा है वृक्षों ने। वृक्ष ही धरातल के सबसे महत्वपूर्ण एवं सुंदर शृंगार माने जाते हैं। इस पर जितने भी लेख लिये जायें वे कम ही महसूस होंगे। इन वृक्षों में औषधीय गुणों से भरपूर है एक वृक्ष नीम।

इस वृक्ष को संस्कृत में निम्ब, नीम, बंगला में नीम, नीम काछ, गुजराती में लीमड़ो, लिमवेड़ों, मराठी में कूड-लिबं, बालन्त लिम्ब, तमिल में वेबुं, तेलगू में वैप्या, मलयालम में वेत्पु, फारसी में नेवबनीम, दरख्तहक, अंग्रेजी में नीम ट्री लैटिन में एजोडिरेक्ता इण्डिको नामों से जाना जाता है। इस वृक्ष को हिन्दी बंगला जैसी समृद्ध भाषाओं के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा में भी नीम का नाम दिया गया है ऐसा क्यों? नीम जैसे महत्वपूर्ण वृक्ष का अमेरिका ने पेटेंट क्यों किया? इस पर कई सवाल उठ खड़े हुए हैं। इन सभी सवालों का सरल जवाब एक ही है कि नीम सर्वाधिक रोगों को दूर करने वाली औषधीयों का भण्डार है तथा अनेक गुणों से सम्पन्न वृक्ष है। इस वृक्ष का प्रत्येक भाग महत्वपूर्ण है। साथ ही इसके प्रत्येक भाग का अगर बारीकी से अध्ययन करें तो पता चल जाएगा कि भारतीय मूल के प्राचीन ऋषियों ने इसको श्रेष्ठ वृक्षों की पंक्ति में स्थान क्यों दिया है?

आज इस वृक्ष के गुण एवं उपयोगिता पर आम भारतीय को चिन्तन करने की परम आवश्यकता है। यह 20 वर्ष में विकसित पेड़ का रूप धारण कर लेता है। नीम का पेड़ एक विशाल पेड़ होता है। इस वृक्ष की 30 फुट से 80 फुट तक ऊँचाई होती है। यह छायादार वृक्षों की अग्रणी श्रेणी में भी गिना जाता है। इसकी छाया शीतल होती है तथा तपती धूप के दिनों में भी बनी रहती है। इसकी छाया जहाँ स्वास्थ्यवर्धक है वहीं इस वृक्ष से निकलने वाली गंध से पर्यावरण भी शुद्ध होता है। सबसे पहले इसकी छाल का अध्ययन करें तो पता चलता है कि यह कितनी अधिक उपयोगी होती है। इसकी सूखी छाल को पानी के साथ घिसकर फोड़े-फुंसी पर लेप करने से बहुत लाभ होता है। वहीं इसको अनाज में रखने पर कीड़ों से साल भर सुरक्षा होती है।

नीम के पत्ते तो बहुत ही गुणकारी होते हैं। पत्तों की ताकत पर ही तो यह छाया देता है। नीम के पत्तों को अनाज में रखने से अनाज को कीड़ों से बचाया जाता है। अंग्रेजी दवा डिटोल हमारे जीवन में जिस काम में उपयोगी होता है उससे कहीं अधिक इसके पत्तों का उबला हुआ पानी उपयोगी होता है। इस पानी को अगर सब्जियों एवं फसलों पर बतौर कीटनाशक छिड़काव करें तो कीटों का तो नाश होगा ही साथ ही सब्जियों, अनाजों के खाने पर कीटनाशकों का जो असर होता है उससे भी छुटकारा मिल सकता है। इसके पत्तों के घर में रहने मात्र से ही विषयुक्त कीटाणुओं का स्वत: ही नाश हो जाता है। इसके फलों से अनेक दवाओं का निर्माण किया जाता है। पत्तों का सार तो आधुनिक साबुनों (नहाने व धोने) में भी मिश्रित किया जाता है। शव यात्रा एवं दाह संस्कार के पश्चात् शव यात्रा में शामिल सभी लोग इसके पत्तों को आज भी चबाते देखे जा सकते हैं। शोकग्रस्त घर के द्वार पर पत्तों समेत टहनी को टांगा जाता है। यह शायद इसलिए किया जाता है कि शव से उत्पन्न रोगग्रस्त कीटाणुओं का नाश हो सके और रोगों से बचा जा सके। साथ ही घर में नीम के पत्तों से हवा भी शुद्ध हो सके।

पहले जब देहात में कृत्रिम बर्फ (हिम) का प्रचलन नहीं हुआ था, तब शव (लाश) को कुछ काल के लिये रखना होता था तो हरे नीम की पत्तों वाली टहनियों के बीच में रखा जाता था। शायद इस प्रक्रिया को इसलिए

अपनाया जाता था, जिससे शव खराब न हो अथवा शव से बदबू (दुर्गन्ध) न उठे। इसके पत्तों को ताजा ब्याई हुई गाय-भैंस को खिलाने से उनकी शारीरिक गन्दगी तो दूर होती है, साथ में दूध भी बढ़ता है। पत्तों का रस प्रसूता स्त्री को चार-पाँच रोज तक पिलाने से वह शीघ्र ही स्वस्थ हो जाती है तथा दूध भी बढ़ता है। इसके सूखे पीले पत्तों को कपड़ों (गर्म व ठण्डे) व पुस्तकों के बीच में कीड़ों से रक्षा हेतु भी रखा जाता है।

नीम की नई कोंपलों का आज भी बड़े-बड़े बुद्धिजीवी लोग चैत्र मास में एक माह तक सुबह-सुबह नाश्ते से पहले सेवन करते देखे जा सकते हैं। इससे पेट की सभी बीमारियों को कोसों दूर खदेड़ा जा सकता है। इससे चर्म रोगों से भी छुटकारा मिल जाता है। इसके पत्तों का रंग गहरा हरा होता है। पत्ते की लम्बाई 5 सेमी. से 10 सेमी. एवं चौड़ाई 2 सेमी. से 4 सेमी. तक होती है। इसके पत्ते टहनी से निकलने वाली सींकों पर लगते हैं। सींकों की पत्तों सहित चौड़ाई 8 सेमी. से 10 सेमी., लम्बाई 10 सेमी. से 2 सेमी. तक होती है। ये सींक भी बड़ी उपयोगी होती है। इन सींकों के बण्डल से लघु झाड़ू का निर्माण किया जाता है जिससे छोटे बच्चे झाड़ू निकालने का काम सीखते देखे जा सकते हैं। सींकों के द्वारा ही दातों के बीच फँसे भोजन के टुकड़ों को निकाला जाता है। भोजन के टुकड़े तो निकालते ही हैं, वहीं इस प्रक्रिया से कई रोगों का नाश भी होता है। इसकी अति पतली टहनी की दातुन भी बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है, जिसके रोज उपयोग करने से दाँतों की सफाई होती है वहीं कीड़ों से रक्षा होती है तथा दाँतों को मजबूती मिलती है।

पाँच-छह वर्ष की आयु में इसका वृक्ष फल देने लग जाता है। इसके फल को निम्बोली नाम से जाना जाता है। वैशाख मास में नीम पर सफेद रंग के सूक्ष्म फूल उगते हैं जिन्हें देहात में बगर या वगर नाम से जाना जाता है। उसी वगर से ही ज्येष्ठ मास आते-आते हरे रंग का फल लगता है। यह हरा फल कड़वा होता है। इस कच्चे फल से सफेद दूध निकलता है। आषाढ़ मास आते-आते यही हरा फल पीले रंग में परिवर्तित होने लगता है और पीले रंग में तब्दील होने पर मधुर एवं स्वादिष्ट हो जाता है। इस फल के भीतर क्रीम रंग का रस भरा होता है, जो सामान्यत: स्वादिष्ट होता है। बड़े-बूढ़े इसके फल का रसपान करने के पश्चात् गुठली फेंकते नहीं है; अपितु इकट्ठी करके उसे सुखाकर चूर्ण बना लेते हैं और वर्ष भर सुबह-सुबह चूर्ण को लेते रहते हैं जिससे पेट की समस्त बीमारियों का नाश होता है। यह गुठली जहाँ उपयोगी होती है वहीं गुठली की गिरी (बीजों का गूदा) भी उपयोगी है। गूदे से तेल भी निकाला जाता है जो बहु-उपयोगी होता है। गुठली से ही नये पौधे का जन्म होता है। इसके पौधे में भारत के हर कोने में पनपने की क्षमता होती है। यह कम अथवा अधिक पानी से भी पनप सकता है। इसकी छांव में हजारों लोग बैठ सकते हैं। देहात के गाँवों में इसके पौधे को गाँव की चौपाल (परस) में लगाया जाता है। गाँवों में आहूत की गई पंचायतें इस पेड़ के नीचे सम्पन्न होती हैं। शायद गाँवों में सच्चे फैसले इसी की छाँव की देन है। सच हमेशा कडुवा होता है और नीम का वृक्ष भी कड़वा होता ही है। आजकल चौपालों की जगह पंचायत घरों ने ले ली है और पंचायत घरों में भी इसके पौधों का रोपण होने लगा है।

इस वृक्ष की लकड़ी भी बहु-उपयोगी होती है। इसकी लकड़ी कड़वी होने की वजह से सदैव कीड़ों की मार से बची रहती है। इससे फर्नीचर का सामान व भवन निर्माण का सामान आदि बनाया जाता है। इसकी लकड़ी से निर्मित सामान सुन्दर एवं मजबूत तो होता ही है साथ में कड़वा तेलयुक्त होने की वजह से लम्बी उम्र के लिये टिकाऊ भी होता है। सदैव कीड़ों से बचा रहता

है। इसलिए **दादा बनाये और पोता बरते** वाली कहावत चरितार्थ होती है। इसकी लकड़ी से निर्मित सामान सदियों तक ज्यों का त्यों बना रहता है।

नीम के कोमल एवं नवीन पत्ते वातनाशक, पित्तनाशक, नेत्ररोग व कुष्ठ रोग को शान्त करते हैं। बड़े पत्ते नेत्रों के लिये हितकारी, कृमि, पित्त और विष आदि के नाशक होते हैं। यह वातकारक तथा सब प्रकार की अरुचि और कुष्ठविनाशक भी हैं। पुराने पत्ते विशेष करके फोड़ों और घावों को दूर करते हैं। नीम के फूल कृमिनाशक, पित्त और कफ के दोषों को दूर करने वाले हैं। इसकी सींके खाँसी, श्वांस, बवासीर, गुल्म, कृमि और प्रमेह को दूर करने वाली हैं। इसके कच्चे फल भेदक हैं, प्रमेह, कुष्ठ का नाश करते हैं। गुल्म, बवासीर और कृमि का भी नाश करते है।। पके फल, रक्तपित्त, कफ, नेत्ररोग, घाव, जीर्णज्वर का नाश करते हैं। नीम का तेल कुष्ठ और कृमि का नाश करता है। नीम का पंचाग खून का विकार, पित्त, खुजली, फोड़े, जलन और कोढ़ का नाश करने वाला होता है। इसका स्नावित पानी पेट की तमाम बीमारियों को दूर करता है। साथ ही खून की सभी बीमारियों, खुजली, फोड़े और कुष्ठ का नाश करने वाला होता है।

नीम का वृक्ष ठण्डा, कड़वा, लघु, ग्राही, तीक्ष्ण अग्निमांद्य व्रणशोधक, सूजन उतारने वाला बालकों के लिये गुणकारी होता है तथा कफ, व्रण, कृमि के पित्त, वायु, कुष्ठ, श्रम, तृषा, अरुचि, रक्त दोष, ऊधर्वरस ज्वर और प्रमेह का नाश करने वाला होता है। नीम की कोंपल, ग्राही, वातकर होती है तथा रक्तपित्त, कुष्ठ, नेत्ररोग का नाश करती हैं। नीम के पीले पत्ते विशेष ऋणनाशक होते हैं। नीम के डंठल कास, श्वास, गुल्म, अर्श, कृमि व प्रमेह का नाश करते हैं। कच्ची निम्बोली, भेदक, स्निग्ध, गुरु, चिकनी होती हैं तथा नेत्र रोग, कुष्ठ रोग, क्षयरोग, रक्तपित्त का नाश करती है। नीम के बीजों का गूदा कुष्ठ और कृमि का नाश करता है। नीम का पंचाग पित्त, रक्तदोष, दाह, व्रण, कुष्ठ का नाश करता है। बीजों का तेल, किंचित उष्ण कडुवा होता है तथा कृमि कुष्ठ, व्रण, वातपित्त, अर्श, रक्तविकार, वायु, पेट की सूजन, ज्वर, जरा, कफ और पित्त का नाश करता है। नीम की छाल पाचक, कड़वी व ग्राही होती है।

नीम का वृक्ष व्रण पर, फूटे हुए फोड़ों के लिये, खुजली पर, सर्प के विष पर, पित्त गिराने के लिये, गर्मी पर, कुष्ठ रोग पर, दाह युक्त सूजन पर, विष ज्वर पर, पित्त ज्वर के दाह पर, गर्म ज्वर पर, पाण्डु रोग पर, विषम ज्वर पर, मूल व्याधि, कृमि और प्रमेह पर सर्प विष न चढ़ने के लिये, स्त्री को प्रसव न होने पर, सोमल के विष तथा कृमि पर, शरीर पर पित्ती उछल आने पर, स्थावर, जंगम सर्व विष पर, सर्व व्रण पर, रक्तस्राव व प्रदर पर, सिक्ता मेह (सित्ता मेह) व मधुमेह पर, कभी किसी प्रकार का रोग न होने के लिये, कुष्ठ, पित्त, कण्ड सम्बन्धी रोगों पर, ग्रीष्म काल में शरीर में ठण्डक लाने और दस्त रोकने के लिये, नहारू पर, उरु स्तंभ पर, प्रमेह, उपदंश, विषम ज्वर पर, आगंतुक व्रण फोड़े पर, बिच्छु के दंश पर, भूख बढाने के लिये, ज्वर पर, शीतला की और सब प्रकार की गर्मी पर, दस्त साफ लाने व शक्ति के लिये, शरीर के सब विकारों पर, सब प्रकार के जख्म, सब तरह के चर्म रोगों पर, त्वचा की जड़ता आदि सैकड़ों रोगों पर, बड़ा उपयोगी होता है।

वृक्ष निघण्टु में पंचनिंग चूर्ण के विषय में बताया गया है कि नीम की जड़, पत्ते, फूल, फल व छाल का साठ तोला चूर्ण बनायें। बाद में लौह भस्म, छोटी हर्र, अरनी के बीज, त्रिफला, भिलावां, बायबिडंग, शक्कर, आँवले, हल्दी पीपल, काली मिर्च, सोंठ, बावची, अमलतास व गोखरू इन प्रन्दह औषधियों को चार-चार तोला लेकर चूर्ण कर लें। फिर इसे नीम के चूर्ण में

मिलाकर भाँगरे के रस और खैर के अष्टम अंश काढ़े में भिगोकर सुखा लें। यह चूर्ण रोज एक तोला खैर की छाल के काढ़े, घी या गाय के दूध के साथ देना चाहिए। इससे सब प्रकार के कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं। यह चूर्ण सर्वरोग नाशक है। आयुर्वेद में नीम के वर्णन पर बहुत कुछ लिखा हुआ है जिसे लेख के बजाए पुस्तक रूप में लिखा जा सकता है।

इस वृक्ष की यह भी विशेषता है कि इसे जितनी बार काटें, उतनी ही बार पुन: पल्लवित हो जाता है। किसान भाई इस वृक्ष का अपने खेतों में रोपण करने से कतराते हैं। उन्हें डर होता है कहीं यह 'बबूल' की तरह धरती का उपजाऊ अंश हजम न कर ले और खेत फसल रहित न हो जाए। उन्हें यह डर निकाल देना चाहिए। इससे उपजाऊ शक्ति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और यह हवा शुद्ध करके उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने में सहायक होता है। स्वच्छ हवा देने व औषध के लिये प्रसिद्ध नीम को धरती का कल्पतरु कहा जाता है। यह पेड़ बूढ़ा होने पर चन्दन की तरह सुगन्ध देने लग जाता है। भारत के इस द्वितीय (दूसरे) चन्दन का अधिकाधिक संख्या में रोपण करना होगा और यह कार्य सरकार व समाज को मिलकर करना होगा। इसका रोपण देश के हर बगीचे, खेत, सड़क पर किया जाये जिससे प्रदूषित हवा को शुद्ध करने में मदद मिल सकेगी। प्राचीन ऋषियों के अनुसंधान को यूं ही बेकार साबित न होने देंवे। जो खोज भारतीय ऋषियों ने की थी और जिस पर ट्रेड मार्क का अधिकार भारत का था उस पर आज अमेरिका ने अधिकार जमा लिया है। गौमूत्र, हल्दी जैसी औषधियों पर पेटेंट करके। इस तरह के पेटेंट को रद्द करवा कर भारत द्वारा पेटेंट कराये जाने की जरूरत है। इस कार्य को करने से पूर्व अपने अन्दर झाँक कर भी देखें कि अमेरिका की हिम्मत कैसे हुई कि उसने नीम आदि पर पेटेंट कर दिया। जब भारतीयों ने इस ओर ध्यान देना छोड़ दिया तब ही यह सम्भव हुआ है।

इन अपवित्र दवाओं का उपयोग करने के बजाए अगर हम भारतीय मूल के वृक्षों, जड़ी-बूटियों आदि से निर्मित दवाओं (पवित्र औषधियों) का इस्तेमाल करें तो शरीर शुद्ध व ताकत वाला होगा। वर्षो पहले किये गये पेटेंटों में भारतीय मूल के वृक्ष, जड़ी-बूटी एवं वस्तुएँ शामिल हैं। इस प्रक्रिया से यही अर्थ निकलता है कि अमेरिका ने हमारे मुँह (मूल) पर तमाचा जड़ दिया है। क्योंकि नीम, हल्दी, गौमूत्र भारतीय मूल के ही तो हैं। अगर मानव धर्म की भलाई चाहते हैं तो हमें भारतीय मूल के सभी वृक्षों को बचाना तो है ही साथ में सरकार व समाज को मिलकर भारतीय मूल की वस्तुओं पर किये गये पेटेंटों को शीघ्र ही रद्द करवा कर अपना ट्रेडमार्क भी लगाना है। इसी में हमारी भलाई निहित है। इस वृक्ष को आन्ध्र प्रदेश में राज्य वृक्ष का दर्जा प्राप्त है। काश! इसे राष्ट्रीय वृक्ष घोषित करने पर विचार किया जाता।

– संकलित

कोई भी व्यक्ति स्वप्न देख-देखकर चरित्रवान नहीं बन सकता। चरित्र की निर्माण तो अपने आपको गढ-गढकर ढाल-ढाल कर करना होता है। कर्तव्य के प्रति निष्ठा, संयम और सदाचार के प्रति श्रद्धा, सत्य के प्रति अनुराग, ज्ञान के प्रति एक जिज्ञासा और मानवता के उत्कर्ष के प्रति एक दृढ आस्था ही महान चरित्र के निर्माण के मुख्य आधार हैं।

– भगवती प्रसाद वाजपेयी

अपनी बात

एक दिन एक आदमी अंधेरी रात में पहाड़ से उतर रहा था। अचानक उसका पैर फिसल गया और वह गिर पड़ा। गिरते समय उसने हाथ लगी एक झाड़ी को जोर से पकड़ लिया। अंधेरी रात थी, नीचे कुछ दिख नहीं रहा था, झाड़ी के लटकता रहा। डर था कि हाथ छूटे और न जाने कितनी गहराई में पडूंगा। तो यह डर था कि हाथ छूटे कि मरा। पकड़े रहा, पकड़े रहा। सर्द रात, अंधेरी रात। नीचे कितना अतल खड्डा। गिरा की हड्डी पसली सब टूट जाएगी, समाप्त हो जाएगा, मिट जाएगा। इसलिए झाड़ी को जोर से पकड़े हुए है, लेकिन कितनी देर पकड़े रह पाएगा? हाथ जकड़ने लगे, सर्दी के कारण जड़ होने लगे। तब उसे लगा कि आज तो सुबह तक टिक पाना बड़ा कठिन है, आज तो मरना ही पड़ेगा। लेकिन फिर भी कोशिश तो करूँ। सुबह हो जाए किसी तरह, तो शायद कोई इधर से निकले। शायद कोई आ जाए तो बचने का उपाय हो जाए। सुबह हो जाए तो देख तो सकूं कि मामला क्या है? कहाँ हूँ? कैसे इसमें उलझा? इस अन्धकार में तो कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता।

वह बहुत चिल्लाया, लेकिन वहाँ कौन सुनता? उसकी आवाज पहाड़ में गूंजती थी और लौट आती थी। वहाँ कोई था ही नहीं, जो सुनता। करीब-करीब हम सब की आवाजें भी इस जीवन रूपी पहाड़ी में गूंजती हैं और लौट आती हैं। आवागमन के चक्र से छुटकारा मिल नहीं पाता। वह व्यक्ति बहुत चिल्लाया लेकिन कोई सुनने वाला था ही नहीं। अंधेरा है चारों तरफ, वहाँ कोई है ही नहीं। आधी रात होते-होते टिके रहना असम्भव सा हो गया। हाथ जड़ हो गये, सरकने लगे। डाल छूटने लगी। इतनी देर ताकत जितने जोर से लगाई थी, उतनी ही जल्दी खत्म हो गई। अब वह घबराया कि मरने के सिवाय कुछ न रहा है। जिस किसी भगवद् रूप को मानता था उसे मन ही मन पुकारने लगा। दुख में ही भगवान याद आते हैं। मौत करीब थी तो याद आने लगे भगवान-मुझे बचाओ। घुप्प अंधकार, वहाँ कौन सुनने वाला आखिर उसके हाथ छूट गए। हाथ छूटते समझा कि गया अब तो, लकिन हैरान हो गया। हाथ छूटने से पाया कि वह तो जमीन पर खड़ा है। वहाँ कोई गड्ढा था ही नहीं, अंधेरे की वजह से लग रहा था कि न मालूम कितना गहरा गड्ढा है। व्यर्थ ही उसने इतना कष्ट उठाया। किसी भी क्षण डाली छोड़ देता तो वह जमीन पर ही खड़ा हो जाता। अंधेरे के कारण भय था।

मौत तो हमको, हरेक को गड्ढे में गिरा ही देगी, चाहे कितनी ही पकड़े रखें। जो पकड़े रखेगा वह व्यर्थ ही दुख उठाता रहेगा। लेकिन जब मौत गड्ढे में गिरा ही देगी यह जो जानते हैं, वे खुद छोड़ देते हैं, गिरा देते हैं, अहंकार को। अहंकार को गिराने से ही पाते हैं कि वहाँ भूमि है। जो मनुष्य यह छलांग लेने का साहस करता है, सोच लेता है कि मौत तो मारेगी ही, क्यों न मैं स्वयं ही मिटा दूं अपने अहंकार को, तो अपने हाथ से मिट जाना सौभाग्य है। मृत्यु हमारा संकल्प नहीं होती, हमारा कृत्य नहीं होती, वह हमारी इच्छा नहीं होती। लेकिन हम स्वयं अहंकार को मारते हैं, वह हमारा संकल्प है, हमारा कृत्य है, हमारी इच्छा है। तब पाते हैं कि इस मौत में अभाव नहीं है, वहाँ आत्मा है। अज्ञान की वजह, भय की वजह से अभाव मालूम होता है। इस प्रकार की मौत के बाद जिस भूमि पर ठहरते हैं, वह भूमि परमात्मा ही है। इसीलिए श्री क्षत्रिय युवक संघ में अहंकार को तिरोहित करने के सूत्र पिरोये गए हैं।

✲

जैसलमेर जिले के छोटे से गाँव मेहराजोत (ग्राम पंचायत उत्तम नगर) निवासी

कमलसिंह भाटी

पुत्र श्री जेठमाल सिंह भाटी को

सेना में लेफ्टिनेंट

बनने पर समस्त पंचवटी परिवार की तरफ से हार्दिक शुभकामनाएं !
स्कूली शिक्षा के समय भाटी ने पंचवटी छात्रावास,
जोधपुर में रहकर अध्ययन किया था ।

-: शुभेच्छु :-

चन्द्रवीर सिंह देणोक, पर्वत सिंह रामदेवरा , अभिमन्यु सिंह देणोक
राजेन्द्र सिंह खोखसर, मदन सिंह आसकंद्रा, रघुवीर सिंह खिरजा
हितेश सिंह रामगढ़, जितेन्द्र सिंह अवाय, यशपाल सिंह सेऊवा
विक्रम सिंह मेरिया, श्याम सिंह रामदेवरा, जितेन्द्र सिंह पारेवर
गुलाब सिंह बालेसर सत्ता, रोहित सिंह जाजोद, नरेंद्र पाल सिंह खिरजा
विरेन्द्रसिंह आसकन्द्रा , महावीर सिंह भारमसर, हनुमान सिंह देणोक,
नारायण सिंह राजमथाई, तेजपाल सिंह दस्सुसर

जुलाई, सन् 2023
वर्ष : 60, अंक : 07

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह